किसी गलत बात का खंडन न करना बौद्धिक बेईमानी है। – कार्ल मार्क्स

मैं मजदूर हूँ

मजदूर के अलावा
मेरी और भी कई पहचान है
मैं मजदूर हूँ साथ ही
ग्राहक, वोटर, हिन्दू, सिख, ईसाई
या मुसलमान भी हूँ
लोक तंत्र का ''लोक'' मैं ही तो हूँ
सियासत की
ऊंची कुर्सियों के नीचे का फर्श भी
मैं ही हूँ
मुझ पर ही
जम्हूरियत के सारे पिल्लर टिके हैं
हाशिये पर खड़ा
सबसे आखिरी आदमी भी मैं ही हूँ
और राजनीति की ऊंचाइयों तक
जो सीढ़ियां जाती है
उसका पहला पायदान भी मैं ही हूँ
धर्म की ऊंची अट्टालिकाओं का निर्माण
मेरे हाथों से होता है
मेरे दान, आस्था और मेरी इबादतों से
धर्म मजबूत होता है
धर्म के बाजार का सेंसेक्स
मेरी जहालत से परवान चढ़ता है
और मेरी जागरूकता से नीचे गिर जाता है
धर्म के लिए यह जरूरी है कि
वह जितना चाहे गिरे
लेकिन उसका सेंसेक्स
कभी न गिरे
इसलिए
धर्म लगातार तय करता रहता है कि
मैं एक अच्छा मजदूर होने के साथ साथ
एक आदर्श भक्त भी बना रहूँ
होटल्स और मेट्रो
कंक्रीट का यह पूरा जंगल
मैंने ही दिहाड़ी पर उगाया है
जिसमे अब
मोटी सेलरी वाले वो सभ्य लोग रहते हैं
जो मुझे लेबर कहते हैं
वे सभ्य हैं और मैं सभ्यता से कोसों दूर हूँ
क्योंकि मैं मजदूर हूँ।

शकील प्रेम

मुख्य संपादक
बलबीर लौंगोवाल
balbirlongowal1966@gmail.com
98153 17028

संपादक
प्रा बलवंत सिंह
tarksheeleditor@gmail.com
94163 24802

विदेशी प्रतिनिद्धि
अवतार गिल, कनेडा
अछर सिंह खरलवीर, कवैंटरी (इंगलैंड)
(+44 748 635 1185)
मा. भजन सिंह कनेडा
बलदेव रहिपा, टोरांटो

पत्रिका शुल्क :-
द्विवार्षिक : 200/- रू.
विदेश : वार्षिक : 25 यू.एस.डॉलर

रचनाएं, पत्र व्यवहार व शुल्क भेजने के लिए पता:
मुख्य कार्यालय
तर्कशील भवन, संघेड़ा बाईपास
तर्कशील चौंक, बरनाला-148101
01679-241466, 98769 53561
tarkshiloffice@gmail.com
पत्रिका को पढ़ने के लिए लॉग ऑन करें:
www.tarksheel.org
Tarksheel Mobile App :
Readwhere.com

तर्कशील पथ पत्रिका हेतु शुल्क
पंजाब नैशनल बैंक में
तर्कशील सोसायटी पंजाब (रजि) के नाम से
खाता सं. 0044000100282234
IFSC: PUNB0004400
में जमा करा सकते है।

प्रा. बलवंत सिंह, प्रकाशक, मुद्रक, स्वामी, संपादक, मकान न. 1062, आदर्श नगर, पिपली, जिला कुरूक्षेत्र-136131 (हरियाणा) द्वारा अप्पू आर्ट प्रैस, शाहकोट से मुद्रित करके तर्कशील सोसायटी पंजाब व हरियाणा के माध्यम से वितरण हेतु जारी किया।

इस अंक में

संपादकीय

तीस्ता सीतलवार एक प्रमुख भारतीय पत्रकार और मानवाधिकार कार्यकर्ता हैं। वह 2002 के गुजरात दंगों के पीड़ितों के मुकदमे में इंसाफ दिलाने व दोषियों को कोर्ट में सजा दिलाने के लिए प्रयास रत रही। वे एक मानवाधिकार संगठन द सिटीजन फॉर जस्टिस की सचिव भी हैं। गुजरात के एटीएस (आतंकवाद विरोधी दस्ते) ने उन्हें तत्कालीन मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी और अन्य लोगों द्वारा दंगों को राजनीतिक समर्थन प्रदान करने का आरोप लगाने के मामले में क्लीनचिट मिलने के बाद मुंबई से हिरासत में लिया है। सुप्रीम कोर्ट द्वारा क्लीन चिट दिए जाने के कुछ ही समय बाद ही यह गिरफ्तारी हुईं। केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह ने एक साक्षात्कार में कहा भी है कि तीस्ता सीतलवाड़ ने 2002 में गुजरात में मुसलमानों के नरसंहार के बारे में पुलिस को 'तथ्याहींन जानकारी' दी थी जो कि गुमराह करने वाली है। इस बयान से यह स्पष्ट होता है कि तीस्ता की गिरफ्तारी का मुख्य कारण पीड़ितों के लिए खड़ा होना ही था। तीस्ता और उनकी टीम 2002 के नरसंहार के अपराधियों को न्याय के कटघरे में लाने के लिए संघर्ष कर रही थी। पूर्व सांसद अहसान जाफरी की पत्नी जाकिया जाफरी ने सुप्रीम कोर्ट में एक याचिका दायर कर जांच एजेंसी से आरोपी को क्लीन चिट देने पे सवाल खड़े किए थे। भीड़ द्वारा उनके घर पर हमला करके उनके पति के साथ ही बहुत से लोगों को जिंदा जला दिया गया था। क्या अब इस देश में पीड़िता के साथ खड़ा होना गुनाह है? क्या पूरी मानवता को तीस्ता के माध्यम से बिना किसी दोष के धर्म के आधार पर मारे गए मनुष्यों की मृत्यु पर भी चुप रहने का संकेत नहीं दिया जा रहा है? क्या उस समय की सरकारों द्वारा इस तरह की हत्याओं को रोकना उनकी जिम्मेदारी नहीं थी? क्या हत्या को सामने होते देख चुप रहना और अपने राज्य कर्तव्य का पालन न करना अपराध नहीं है? तीस्ता की गिरफ्तारी आज सैकड़ों सवाल खड़े करती है। इस गिरफ्तारी का कड़ा विरोध होना चाहिए। सभी न्यायप्रिय संगठनों को इस जघन्य तानाशाही के खिलाफ मैदान में उतरना होगा।

धर्म का टैक्स-डर का हथियार

– भारत भूषण श्रीवास्तव

डर एक सामान्य मनोभाव है जिस के धर्म की गिरफ्त में जाते ही उस का व्यवसाय शुरू हो गया। लोगों को तरह तरह के धार्मिक डर दिखा कर उन से पैसा झटका जाता है। जब युग तर्क, तथ्य और तकनीक का हो तो धर्म के नाम पर पैदा किया गया डर एक बड़ी रुकावट भी है और जेबों पर भारी डाका भी।

कोई और युग होता तो उस बेचारे भक्त का बुत बन जाना तय था या फिर पुजारी के श्राप के मुताबिक वह कुत्ता, बिल्ली, मेंढक या चूहा योनि में भी शिफ्ट हो सकता था। लेकिन वह बच गया। 'कलियुग' का प्रभाव ही इसे कहा जाएगा कि इस भक्त ने श्राप की धौंस में न आते मंदिर में हल्ला मचाना शुरू कर दिया कि देखो भाईयो, यह पुजारी मुझे श्राप की धमकी दे रहा है।

वाकेआ उज्जैन के एक प्रसिद्ध मंदिर का है, तारीख थी 25 जनवरी, 2022, जब इस मंदिर के पुरोहित के एक असिस्टैंट ने एक भक्त को धमकी दी कि दानदक्षिणा दो, नहीं तो श्राप दे दूंगा। भक्त पहले तो थोड़ा डरा, फिर उस के सिक्स्थ सैंस ने उसे चेताया कि ये पौराणिक भभकियां हैं। श्राप का रिवाज तो खत्म हो गया है। आजकल जमाना बद्दुआओं का है और वे भी लग ही जाएं, इसकी गारंटी नहीं, इतना ज्ञान जेहन में आते ही वह बिफर पड़ा।

पंडेपुजारियों की लूटमार और धौंसधपट से पीड़ित भक्तों ने देखते ही देखते एक टैंपरेरी यूनियन बना डाली जिस से मौका ए वारदात पर मंदिर प्रबंधन के साथ साथ कुछ पुलिस वाले भी आ पहुंचे। मीडियाकर्मियों ने भी तत्परता दिखाई। थोड़ी सी पंचायत यानी इंवैस्टिगेशन के बाद जो तथ्यनुमा बातें छन कर सामने आई उन्होंने एक बार फिर मंदिरों व उनके अंदर बाहर घूमते दलालों की कलई खोल दी।

पता चला कि देशभर के मंदिरों की तरह इस मंदिर में भी इस तरह की घटनाएं रोजमर्रा की बातें हैं। आजमन से लेकर वी.आई.पी. दर्शन, आरती और अभिषेक तक के मनमाने पैसे वसूले जाते है जिन में से कुछ की बाकायदा थाने में एफ.आई.आर. भी दर्ज हुई हैं। चंडीगढ़ से आए एक श्रद्धालु से नागनागिन का जोड़ा चढ़ाने के एवज में 500 रुपए मांगे थे।

मंदिर प्रशासक ने सी.सी.टी.वी. फुटेज देखने के बाद भक्तों को सही जबकि पुजारियों को दोषी पाया और उनके मंदिर में प्रवेश पर पाबंदी की घोषणा करते बात खत्म कर दी।

देशभर के मंदिरों में ऐसे आम हैं कि मूर्ति का पुजारी भक्तों से बदतमीजी करते उन्हें धकियाता है और अधिकांश भक्त इसे भी प्रभुइच्छा समझ प्रसाद की तरह ग्रहण कर लेते हैं। लेकिन जिन का स्वाभिमान आस्था पर भारी पड़ता है, वे वैसा ही हल्ला मचाते विरोध दर्ज कराते हैं जैसा कि इस मंदिर में हुआ।

कारोबार डर का

उज्जैन के मामले में दिलचस्प बात श्राप का डर दिखाना था जिस का रिवाज लुप्त सा हो चुका है, हालांकि दूसरे हजारों तरीके मौजूद हैं जिन से लोगों को पहले डराया जाता है, फिर डर दूर करने के नाम पर उनकी जेबें ढीली की जाती हैं।

धर्म का धंधा दरअसल, टिका ही डर पर है जिस पर मशहूर कथाकार मुंशी प्रेमचंद ने अपनी रचना 'रंगभूमि' में एक जगह कहा है-

'धर्म का मुख्य स्तंभ भय है, अनिष्ट की शंका को दूर कर दीजिए, फिर तीर्थयात्रा, पूजा-पाठ, स्नानध्यान, रोजा नमाज किसी का निशान भी न रहेगा। मस्जिदें खाली नजर आएंगी और मंदिर वीरान।'

बात सही है, धर्म कोई भी हो, उस का कारोबार सिर्फ डर से चलता है। लोग डरेंगे नहीं तो मंदिर, मस्जिद, चर्च क्यों जाएंगे जहां डर दूर करने का 'तथाकथित' शर्तिया इलाज किया जाता है। यह डर भी कोई कुदरती नहीं है बल्कि धर्म का पैदा किया हुआ ही है। ठीक किसी गांव के बाहर के पीपल के पेड़ का जैसा जिसके बारे में गांव का निक्कमा और चालाक आदमी प्रचार करता है कि वहां मत जाना, वहां भूत, प्रेत और चुड़ैल रहते हैं जो राहगीरों को मार डालते हैं, उनका खून पीते हैं या उनसे चिपक जाते हैं।

डर फैलाने की बाबत वह तरह-तरह के प्रपंच और षड्यंत्र भी रचता है, जब गांव वाले डर की गिरफ्त में आ जाते हैं तो वह गंडा, तावीज, तंत्रमंत्र और झाड़फूंक की दुकान खोल कर बैठ जाता है।

यही हाल ब्रैंडेड धर्मस्थलों का है जहां लोग डर से

मुक्ति के लिए ज्यादा जाते हैं। इनमें बड़े-बड़े पंडेपुजारी और पुरोहित पैसा समेटने को बैठे होते हैं। उज्जैन ने नए किस्म का डर फैलाने की कोशिश की थी जिसमें वे कामयाब नहीं हो पाए। यह और बात है, नहीं तो धार्मिक डर की कमी नहीं जिनसे मुक्ति पाने को लोग अपनी मरजी से लुटते पिटते हैं।

धर्म के प्रमुख डर

बिना किसी शोध के कहा जा सकता है कि हमारे आप के इर्द गिर्द जितने भी डर हैं, उनमें से 95 फीसदी धर्म की उपज हैं, इनको सूचीबद्ध करना असंभव है। तमाम धर्मग्रंथों में लोगों को कितनी तरह से डराया गया है, यह हर कभी सोशल मीडिया पर वायरल होती एक पोस्ट से पता चलता है। इसके मुताबिक, धर्म और उसके दुकानदारों द्वारा फैलाए गए प्रमुख डर ये हैं:-

- धर्म के ठेकेदार कहते हैं कि सबसे पहले तो हम से डरो, मतलब ऊंची जाति वालों से डरो।
- फिर भगवान से डरो।
- फिर शैतान से डरो।
- पिछले जन्म और अगले जन्म के कर्मों से डरो।
- गृहतारों, नक्षत्रों से डरो।
- हाथ की रेखाओं, जन्मकुंडली, आने वाले भविष्य से डरो।
- उपवास में उपवास टूट जाए तो उस से डरो।
- मांगी हुई मन्नत पूरी न कर पाए तो डरो।
- जादू टोने से डरो।
- नीबू मिर्ची के यंत्र से डरो।
- चौराहों पर उतार पर रखे गए उतारे से डरो।
- काली बिल्ली रास्ता काटे तो डरो।
- कौवों की कांवकांव से डरो।
- रात को उल्लू देखे तो डरो।
- कुत्ते के रोने से डरो।

(लोगों का मानना है कि अगर बिल्ली रास्ता काट जाए तो कुछ न कुछ अपशगुन होता है, यह एक डर है जो अंधविश्वास को बढ़ावा देता है।)

- रात को गूलर, पीपल के पेड़ों से डरो।
- पुराने घरों से डरो।
- रात को शमशान से गुजरते वक्त डरो।
- बाईं आंख फड़फड़ाए तो डरो।
- खाने में बाल आ जाए तो डरो।
- कोई छीकें तो डरो।

डरो, डरो और डरो, सिर्फ धर्म के नाम पर डरते रहो और भी बहुत सारे डर हैं जो सिर्फ भारत में बड़े गर्व से थोपे जाते हैं क्योंकि यहां लोग दिमाग को लौक कर के चाबी और को दे देते हैं। वे खुद अपनी बुद्धि व तर्क से सोचते ही नहीं। जो सोचते हैं उन्हें नास्तिक, विधर्मी, वामपंथी, देशद्रोही करार दे कर उनका हर स्तर पर बहिष्कार किया जाने लगता है। मानो जिंदा रहने और मानव योनि में रहने का हक उसी को है जो धर्म के डर और आंतक को स्वीकारता हो।

डर के ममले पर भगवान और शैतान दोनों में कोई खास फर्क नहीं किया गया है। पौराणिक साहित्य का आधार ही ये 2 तरह की कथित शक्तियां हैं। कहा यह जाता है कि भगवान हमें शैतान से बचाता है यानी कल को शैतान बचाने की जिम्मेदारी निभाने लगे तो लोग उसे भी पूजने लगेंगे। इसलिए पूजा-पाठ की बीमारी कुछ इस तरह फैलाई गई है कि यह किसी नशे की लत से भी ज्यादा घातक हो गई है।

जब लोग पूजा पाठ के आदी हो गए तो इस पर भी डर की दुकान चमकाई जाने लगी कि पूजा अगर गलत तरीके से करोगे तो पाप लगेगा और अनिष्ट हो जाएगा। पूजा पाठ को लेकर इतने नियम कानून बना दिए गए कि लोग उनसे भी डरने लगे। मुंशी प्रेम चंद जी ने इस मानसिकता को जड़ से पकड़ा कि अनिष्ट की शंका त्याग दो तो कोई समस्या ही नहीं रह जाएगी पर धर्म का षड्यंत्र देखिए कि अनिष्ट का कारक भी भगवान की इच्छा की घोषित कर दिया गया।

बाई आंख फड़कना, बिल्ली का रास्ता काटना, छींक आना जैसे उदाहरण अनिष्ट का संकेत माने जाते हैं जिनके पीछे वैज्ञानिक तो दूर, कोई अवैज्ञानिक वजहें भी नहीं है। इन से बड़े उदाहरण हैं पूजा का दीपक बुझ जाना, कलश का अपने आप लुढ़क जाना, जानवरों का रोना आदि जिन्हें इफरात से हिंदी फिल्मों में दिखावा जाता है कि यहां निरूपा राय या कामिनी कौशल की पूजा का दीपक बुझा नहीं कि वहां उन का बेटा अमिताभ बच्चन या मनोज कुमार मुसीबत में पड़ गया।

पूजापाठ से संबंधित डर पर गौर करें तो मान्यता है कि नीले या काले कपड़े पहन कर पूजा करने से पाप लगता है । अगर किसी लाश को छुआ है और बिना नहाए पूजा कर ली तो ऐसे व्यक्ति को पाप लगता है। लोग तब भी पाप के भागीदार माने जाते हैं जब वे सहवास के बाद बिना नहाए पूजा-पाठ कर लेते हैं। क्रोध में पूजन करने से भगवान गुस्से

हो जाता है और सजा देता है। यह सैकड़ों बंदिशें बताती हैं कि भगवान और शैतान में कोई खास अंतर नहीं हैं। भगवान अगर वाकई भला करने वाला (जैसा कि माना जाता है) और रहम दिल होता तो इन बातों पर क्रुद्ध न होता।

दरअसल, ये और ऐसे सैंकड़ों तरह के प्रपंच पैसे कमाने की गरज और मकसद से बनाए गए हैं जिस से लोग इन नियमों को बनाने वाले और उनका पालन करवाने वालों की गुलामी ढोते रहें नहीं तो नर्क की सजा भुगतने को तैयार रहें।

डर का मनोविज्ञान

इन सजाओं का इतना वीभत्स चित्रण और वर्णन है कि अच्छे खासे लोग भी डरने लगें।

आम लोग सबसे ज्यादा मौत से और पाप से डरते हैं। मृत्यु एक दिन आनी हैं, यह हर कोई जानता है लेकिन धर्म यह कहते डराता है कि मरने के बाद भी आप चैन से नहीं रह सकते, ऊपर कहीं आप को अपने किए कर्मो की सजा मिलती ही है। कुल 84 लाख नर्क हैं और उनमें से भी 21 घोर नर्क हैं जहां पापियों को तरह तरह की सजाएं दी जाती हैं। महावीचि नाम का नर्क खून से सना हुआ है जिसमें जीवों को कांटों से चुभो कर यातनाएं दी जाती हैं।

इसी तरह कुंभीपाक नाम के नर्क में पापियों को गरम बालू और जलते अंगारों पर नंगे बदन लिटाया जाता है। रौरव नर्क में लोहे के जलते हुए तीरों से लोगों को बींधा जाता है। अप्रतिष्ठ नर्क में खासतौर से उन लोगों को सजा दी जाती है जो ब्राहणों को सताते हैं। इस नर्क से मूत्र, मवाद और उलटियों में लोगों को डुबोया जाता है।

अब भला कौन भला आदमी इन नर्कों की यातनाएं भुगतना चाहेगा। इसलिए लोग डरते हैं और खूब दानदक्षिणा भी धर्म के ठेकेदारों के बताए मुताबिक देते हैं। कोई यह नहीं सोचता कि इन कपोल कल्पनाओं का आधार और प्रमाण क्या हैं। लोग ज्यादा ऐसा न सोचने लगें, इस बाबत इफरात से धार्मिक पांखड आए दिन समारोह पूर्वक आयोजित किए जाते हैं। इनमें पुराने, घिसेपिटे पौराणिक प्रसंगों को नए नए रोचक तरीकों से बाचा जाता हैं।

दिलचस्प बात यह है कि डर के इस कारोबार में मेहनत, लागत और पैसा भी छोटी जाति वालों का लगता है जबकि मुनाफा धर्मगुरुओं के हिस्से में जाता है। बात 'शोले' फिल्म के उस डायलौग जैसी है जिसमें डाकू गब्बर सिंह रामगढ़ वालों से कहता है कि 'गब्बर के ताप (कहर) से तुम्हें एक ही आदमी बचा सकता है...खुद गब्बर...और इसके एवज में अगर मेरे आदमी तुम से थोड़ा सा अनाज व पैसा लेते हैं तो कोई गुनाह नहीं करते।'

यही धर्मस्थलों की कहानी है जहां ऊपर वाले के कहर का डर दिखा कर नीचे वाले डर के हथियार से अनाज, पैसा, सोना, चांदी, कपड़े, जमीन, दूधमलाई, मिठाई खटाई और जाने क्या क्या वसूला करते हैं, ये डाकू नहीं तो और क्या हैं।

अधिकतर मनोविज्ञानी यह मानते हैं कि डर निहायत ही प्राकृतिक मनोभाव है और आदमी की अधिकांश तकलीफों की वजह डर है। कार्ल गुस्ताव जुंग के मुताबिक, मृत्यु का डर ही सभी मनोरोगों का कारण है। मृत्यु के डर को धर्म ने दूर करने की बजाय जम कर किस तरह भुनाया, यह ग्रंथों को पढ़ कर सहज समझा जा सकता है।

मनोविज्ञान कभी किसी काल्पनिक संसार के अस्तित्व से सहमत नहीं हुआ, उलटे वह जरूर बताता रहता है कि दिमाग से कमजोर लोग आपने आसपास एक कालपनिक दुनिया बुन लेते है और उसको ही सच मान बैठते हैं। ऐसे लोग सिजोफ्रेनिया के मरीज कहे जाते हैं, जो लोग पार्टटाइम या दिन में कुछ समय के लिए धर्म द्वारा बुनी गई काल्पनिक दुनिया में विचरते हैं। उन्हें मानसिक रोगियों की श्रेणी में क्यों नहीं रखा जाना चाहिए, इस पर बहस की तमाम गुंजाइशें मौजूद हैं।

महिलाएं डर की मुख्य शिकार

महिलाओं को सेविका, दासी और भोग्या करार देने वाले धर्म में मासिक धर्म का डर भी विस्तार से बताया गया है जिसे बिना पढ़े 12-14 साल की वह किशोरी भी समझ जाती है जिसका पीरियड शुरू होने वाला होता।

पहले मासिकधर्म में ही धर्म के ये फरमान और फतवे युवतियों की रगरग में नसीहतों के इंजैक्शनों के जरिए ठूंस दिए जाते हैं कि अब तुम 5 दिन अपवित्र रहोगी। तुम्हें पूजापाठ नहीं करना है। किचन में दाखिल नहीं होना है। किसी को छूना भी नहीं है और पलंग के नीचे सो सको तो और बेहतर है और साथ ही इन दिनों अचार को हाथ मत लगाना नहीं तो वह खराब हो जाएगा। गाय को छुओगी तो वह बांझ हो जाएगी। तुम्हें मेकअप भी नहीं करना है और पौधों को पानी भी नहीं देना है, नहीं तो वे सूख जाएंगे। वहीं, अगर शादीशुदा हो तो भूले से भी पति के नजदीक न जाना और छूना नहीं, वरना उसकी उम्र कम हो जाएगी और तुम जल्द विधवा हो जाओगी।

पीरीयड के दौरान महिला को पापिन और गईगुजरी माना जाता है जो अगर मंदिर चली जाए तो वह भी अपवित्र

हो जाता हैं। डर का ऐसा रौद्र् रूप शायद ही कहीं और देखने में आए कि 4-5 दिन महिला को नियमित बरतनों में खाना भी न दिया जाए। इस डर पर आए दिन हल्ला मचता रहता है लेकिन महिलाओं की पारिवारिक, सामाजिक और धार्मिक हैसियत ज्यों की त्यों रहती हैं।

शिक्षित परिवारों में इतना जरूर बदलाव आया है कि महिलाओं को नीचे नहीं सोना पड़ता। खाने को ठीक ठाक मिल जाता है और वे पूजा घर छोड़ कर पूरे घर में घूम सकती हैं। यानी डर और हीनभावना दूर करने की कोई कोशिश नहीं की जाती। इन दिनों में उन के झाड़ूबुहारी और साफसफाई करने पर कोई पाबंदी नहीं है क्योंकि ये तो 'शूद्रकर्म' होते हैं।

5 दिन महिलाओं की जान योनि से रिसते रक्त, जो निहायत ही प्राकृतिक शारीरिक प्रक्रिया है, में अटकी रहती है कि कब यह झंझट खत्म हो और वे सामान्य जिंदगी जिएं, इस दौरान वे डरती रहती हैं कि भूले से भी मुंह से भगवान का नाम न निकल जाए और पति या घर के अन्य पुरुषों को वे धोखे से टच न कर लें।

धर्म के उद्‌भव से लेकर आज तक महिलाएं उसकी सौफ्ट टारगेट हैं तो हैं। इस पर थोड़ा सा हल्ला बताता है कि हम एक कायर समाज में रहते हैं और मजाक यह कि इसी आधार पर विश्वगुरु बनने का ढिंढोरा पीटा करते हैं।

इलाज क्या

हर किसी के अचेतन में गहरे तक पसरे धार्मिक डर खत्म करने के लिए दृढ़ इच्छाशक्ति, पाखंडों से लड़ने की क्षमता होना और इनसे भी ज्यादा जरूरी है तर्क करना, डराने वालों को उनकी हैसियत बताते उनकी मंशा पूरी न होने देना जो सिर्फ डरा कर पैसा वसूलने की होती है।

यह लूट असल में एक टैक्स की तरह है जो आम लोगों की आय का बड़ा हिस्सा खा जाता है। आज भी पौराणिक युगों की तरह हमें भरोसा दिया जा रहा है कि अगर पैसा दिया तो ही धर्म का डर नहीं रहेगा। यह कैसा डर का टैक्स है।

लालच और मुफ्तखोरी पर लगाम ऐसे नहीं कसेगी कि लुटेरों के खिलाफ कभी कभार, फौरी तौर पर अपनी तसल्ली के लिए उनका विरोध करते खुद की पीठ थपथपा ली जाए, बल्कि बहिष्कार धर्मस्थलों का करना पड़ेगा जो धार्मिक डर के डेरे और अड्डे है और ऐसा करने की हिम्मत न जुटा पाएं तो डरते रहिए, लुटते रहिए।

(स्रोतः सरिता (फरवरी 2022, दूसरा)

धर्म और भगवान

मैंने अपने धर्म के नारे लगाए
उसने अपने धर्म के
मैंने अपने भगवान का झंडा उठाया
उसने अपने भगवान का
बात बढ़ती ही चली गई
और वहीं पहुंच गई
जहां अक्सर पहुंचती है
वो भी मारा गया
मैं भी मारा गया
घर उसका भी गया
घर मेरा भी गया
बड़ी मुश्किल से बचाए हमने
अपने-अपने धर्म
और
अपने-अपने भगवान

-जयपाल

ऐ इन्सानो!

आँधी के झूले पर झूलो,
आग बबूला बन कर फूलो।
कुरबानी करने को झूमो,
लाल सबेरे का मूँह झूमो।
ऐ इन्सान्नो! ओस न चाटो,
अपने हाथों पर्वत काटो।
जो रोटी का युद्ध करेगा
वह रोटी को आप वरेगा।

मुक्ति बोध

किताबों ने कहा

हमें पढ़ो, तांकि तुम्हारे भीतर-चीज़ों को बदलने की बेचैनी पैदा हो सके।

– मंगलेश डबराल

चौकी लगाने वाली के चक्कर में

– बलवंत सिंह लेक्चरार

हमारे समाज में साधारण लोगों के सामने जब कोई समस्या खड़ी हो जाती है तो आमतौर पर अंधविश्वासी लोग उस समस्या के समाधान के लिए किसी ना किसी बाबा, तांत्रिक मुल्ला-मौलवी अथवा किसी देवी देवता के नाम पर चौकी लगाने वाले की शरण में पहुंच जाते हैं। चौकी लगाने वाले ढोंगी साधारण लोगों की अंधविश्वासी मानसिकता का खूब नाजायज़ फायदा उठाते हैं। अंधविश्वास में पड़ कर बहुत से भोले-भाले लोगों के घर तक बर्बाद हो जाते हैं। परंतु दूसरी तरफ अंधविश्वास फैला कर चौकियां लगाकर धंधा करने वाले ढोंगी लोग खूब कमाई करते चले जाते हैं। पिछले दिनों ऐसा ही एक मामला मेरे सामने आया जिसमें काली माता की चौकी लगाने वाली एक महिला ने उसके पास अपनी लड़की की परेशानी का समाधान करवाने के लिए पहुंचे एक परिवार को बर्बादी के कगार पर लाकर खड़ा कर दिया था।

सुभाष एक टैक्सी ड्राइवर था। वह शहर में किसी कंपनी की टैक्सी चलाता था। शहर के पास बसी एक बस्ती में उसने अपना एक मकान बना लिया था और उसी मकान में वह अपने परिवार के साथ खुशी से अपना जीवन व्यतीत कर रहा था। परिवार में उसके पास एक लड़की तथा एक लड़का था। एक लड़की पूजा मैट्रिक पास करने के पश्चात बस्ती की अन्य लड़कियों के साथ किसी कंपनी में एक ठेकेदार मनोज के पास मजदूरी करने के लिए जाया करती थी। पूजा की मां अपने घर में रहकर गृह कार्य की सारी जिम्मेदारी निभा रही थी। कभी-कभी पूजा की मां भी उनके साथ शहर में उसी ठेकेदार के पास यानि मजदूरी करने के लिए चली जाया करती थी। पूजा अब 20 वर्ष की हो चुकी थी पूजा के घर वालों ने अपने कई रिश्तेदारों में उसके रिश्ते के लिए कोई योग्य वर ढूंढने के लिए बात चला रखी थी। संयोगवश उनके एक रिश्तेदार ने अपने गांव में अपना दस्तकारी कारोबार चला रहे एक लड़के के बारे में बात चलाई। पूजा के मां-बाप ने अपने रिश्तेदार के पास पहुंच कर बहाने से उस लड़के को व उसके घर बार को देखा। सुभाष एवं उसकी पत्नी पूजा के लिए वह लड़का एक योग्य वर लगा। उन्होंने अपने रिश्तेदार के माध्यम से रिश्ते की बात चलाई। दोनों ही पक्षों को यह रिश्ता पसंद था। अत: पूजा का उस गांव में रिश्ता तय हो गया। रिश्ता तय हो जाने के पश्चात पूजा के मां-बाप को उसके लिए दान दहेज एकत्र करने की चिंता हो जाना स्वाभाविक ही था। अत: अब पूजा की मां सुबह जल्दी उठकर अपने घर का सारा काम जल्दी से निपटा कर पूजा के साथ ही मजदूरी करने के लिए शहर में जाने लग गई। कुछ दिन तक तो सारा काम सामान्य रूप से चलता रहा परंतु कुछ दिनों के पश्चात पूजा के व्यवहार में परिवर्तन आना शुरू हो गया। वह घर में तथा अपने कार्यस्थल पर चुपचाप सी रहने लग गई। कभी-कभी चक्कर आने की शिकायत करने लगी। अब कभी-कभी उसे दौरे भी पढ़ने लगे। दौरे ज्यादातर उसे अपने कार्यस्थल पर ही पढ़ते थे। कार्यस्थल पर उसे जब भी दौरा पड़ता तो उनका ठेकेदार मनोज कुछ अन्य लड़कियों की सहायता से उठवाकर अपने दफ्तर में ले जाता। दफ्तर में पूजा घंटा-दो घंटे आराम करने के पश्चात ठीक होकर अपने काम पर लौट आती। धीरे-धीरे उसके दौरे बढ़ते चले गए। घर वाले उसे डॉक्टरों के पास ले गए। डॉक्टरों ने उसके खून की जांच की तथा अन्य कई जरूरी टेस्ट किए। सारे ही टेस्ट समान्य निकले तो उसके अंदर कमजोरी बता कर पूजा को ताकत की कुछ दवाइयां देकर कुछ दिन घर पर रहकर काम करने का निर्देश दे दिया। अब पूजा तो आराम करने के लिए अपनी दादी के पास घर में ही रह जाती और उसकी मां मजदूरी करने के लिए काम पर चली जाती।

घर पर रहते हुए पूजा की तबीयत और अधिक बिगड़ने लगी। उसे दौरा पड़ने के साथ-साथ अत्यधिक क्रोध आना भी शुरू गया। उसने गुस्से में आकर घर में तोड़फोड़ करना भी शुरू कर दिया। अब उसके मुंह से भूत-प्रेत बोलना भी शुरू कर दिया। अब चारपाई पर आराम करने के लिए एकदम से उठ कर बैठ जाती और बदली हुई आवाज में यह कहते हुए कि मैं इसे छोड़ूंगा नहीं, इसे अपने साथ ले जाऊंगा, घर से बाहर भागने की कोशिश करने लगती। परेशान होकर उसकी मां ने भी काम करना बंद कर दिया और पूजा पर पहरा रखना शुरू कर दिया।

जब पूजा के सिर पर आकर कथित भूत-प्रेतों ने बोलना और धमकाना शुरू कर दिया तो उसे उस इलाके में काली माता की चौकी लगाने वाली एक भक्तिनी के पास ले गये। उस भक्तिनी ने चौकी लगा कर फिर पूजा के गले में एक धागा बांध कर उसे आशाीर्वाद दिया और उसे रोजाना काम पर जाने का निर्देश दे दिया। उसके पश्चात् पूजा के व्यवहार में काफी परिवर्तन आ गया। अब वह रोजाना आपने काम पर जाने लग गई। अब उसे कभी कभार ही दौरा पड़ता था तथा क्रोध आना भी बन्द हो गया था। वह नियमित तौर पर काली माता की चौकी पर भी हाज़िरी देती रही।

इसी दौरान पूजा की शादी तय कर दी गई। जब पूजा की शादी में दो महीने रह गये थे तो एक दिन वह घर से भाग गई। घर वालों ने हर जगह पर उसे तलाश किया परंतु वह नहीं मिली। फिर चार दिन के पश्चात वह अचानक अस्त-व्यस्त हालत में अपने आप ही घर आ गई। घर वालों ने प्यार से दुलार से और फिर डांट-फटकार से तथा मार-पिटाई कर के भी उसके घर से भागने के बारे में बहुत पूछताछ की परंतु उसका एक ही जवाब था कि उसे कुछ भी नहीं पता। परेशान हो कर वे उसे काली माता की चौकी पर ले गये। अब उस भक्तिनी ने पूजा के ईलाज के नाम पर उन से हजारों रूपये का सामान मंगवाया तथा पहले से उसके गले में डाला हुआ धागा बदल दिया और फिर पांच चौकियां भरने के निर्देश दे दिया ।

अब घर वालों ने पूजा का काम पर जाना बिल्कुल बंद करवा दिया तथा उसका मोबाइल भी छीन लिया। अपनी आस्था के चलते पूजा की मां पूजा को काली माता की चौकी पर ले गई। चौकी पर उस भक्तिनी ने पूजा को एक विशेष झाड़ा लगाने के लिए अपने विशेष कमरे में अकेली को बुला लिया। फिर 10-15 मिनट के पश्चात् पूजा झाड़ा लगवा कर बाहर निकल आई। उस कमरे से बाहर निकलते समय पूजा के चेहरे पर प्रसन्नता तैर रही थी। अपनी बेटी को खुश देख कर उस की मां ने चैन की सांस ली तथा वह उस भक्तिनी का बार-बार धन्यवाद कर रही थी। घर आकर पूजा पूरी तरह से प्रसन्न रहने लग गई। अपनी बेटी को पूरी तरह से तंदरुस्त देख कर उसके घर वाले भी पूरे खुश थे और वे अपनी बेटी की शादी की तैयारियों में जी-जान से जुट गये।

माता की भक्तिनी से पूजा का झाड़ा लगवा कर आये हुए अभी चार दिन ही बीते थे कि एक रात को पूजा अपने घर की दीवार को फांद कर घर से भाग गई। सुबह उठने पर अपनी बेटी को घर में न पा कर घर वाले अत्यंत परेशान हो उठे। उन्होंने हर जगह पर पूजा की तलाश की परंतु वह कहीं पर भी नहीं मिल रही थी। फिर सात-आठ दिन के पश्चात् सुभाष के एक टैक्सी ड्राईवर मित्र ने उसे बताया कि उसने पूजा को शहर के एक होटल में घूमते हुए देखा है। सुभाष अपने उस मित्र को लेकर उसी समय उस होटल में पहुंचा तो पाया कि पूजा वहीं पर एक कमरे में बैठी हुई थी।

क्रोध में आकर सुभाष ने पूजा को पकड़ कर दो-चार थप्पड़ लगाए और उसे बाजू से खींच कर अपने साथ ले जाने लगा तो पूजा ने चीखना-चिल्लाना शुरू कर दिया। एक लड़की के चीखने-चिल्लाने की आवाज सुन कर होटल के मैनेजर ने तत्काल पुलिस को फोन पर इस की सूचना दे दी। जल्दी ही पूलिस की वैन होटल में पहुंच गई और उन सभी को थाने में ले गई। उसी समय थाने में ठेकेदार मनोज भी पहुंच गया। थाने में पूजा ने ब्यान दे दिये कि वह खुद ही अपनी मर्जी से मनोज के साथ गई थी। पूजा के लिखित में ब्यान लेने के पश्चात पुलिस वालों ने मनोज को जाने दिया और पूजा को उसके घर वालों के हवाले कर दिया। घर पर आकर घर वालों ने पूजा की खूब पिटाई की परंतु उस पर इसका कोई असर नहीं हो रहा था। उन्होंने पूजा के कहीं भी आने जाने पर पूरी तरह से प्रतिबन्ध लगा दिया तथा घर में दिन-रात उस पर कड़ी निगरानी शुरू कर दीं। कड़ी निगरानी के दौरान पूजा की मां को संदेह हुआ कि रात के समय अपने बिस्तर पर पड़ी हुई कम्बल में मुंह छुपा कर किसी से बातें कर रही है। जब उसने पूजा की तलाशी ली तो पाया कि पूजा ने अपने अंडरवियर में एक मोबाइल छुपाया हुआ है। उसने क्रोध में आ कर तुरन्त वह मोबाइल को तोड़ दिया। घर वालों द्वारा खूब पिटने के पश्चात् उसने बताया कि वह मोबाइल माता की भक्तिनी ने मनोज से लेकर झाड़ा लगाते समय उसको दिया था। उसी मोबाइल से बातचीत कर के रात के समय बड़े गेट को ताला लगा होने के कारण वह घर की दीवार फांद कर बाहर निकल गई थी। बाहर गली के अंधेरे कोने में मनोज मोटर साईकिल लेकर उसका इंतजार कर रहा था।

अब पूजा को फिर से दौरे पड़ने शुरू हो गये और उसने सिर घुमा कर खेलना शुरू कर दिया। अब फिर उसके मुंह से कथित भूत-प्रेतों ने उसे अपने साथ ले जाने की बातें बोलना शुरू कर दिया। परेशान हो कर वे पूजा को लेकर कई बाबाओं के पास गये। हजारों रुपया बर्बाद करने के पश्चात् भी

पूजा की हालत और अधिक बिगड़ती चली जा रही थी। अब पूजा की शादी में केवल एक महीना रह गया था। अत: घर वालों की परेशानी और अधिक बढ़ती चली जा रही थी। इसी दौरान उनके एक परिचित ने जो कि तर्कशील सोसायटी द्वारा किये जा रहे जनहित कार्यों के बारे में जानता था, उनको मेरा पता बता कर मेरे पास परामर्श केन्द्र में भेज दिया।

मैंने पूजा के मां-बाप से सारी जानकारी प्राप्त करने के पश्चात् पहले तो उन्हें से सवाल किया कि जब लड़की किसी को चाहती है तो आप उसकी शादी उसकी इच्छा के विरुद्ध क्यों करना चाहते हैं। उनका जवाब था कि लड़का उनकी जात-बिरादरी का नहीं है। फिर उन्होंने अपनी मजबूरी बताई कि 'अगर लड़की इस के बारे में उसका रिश्ता तय होने से पूर्व ही सारा कुछ बता देती तो हम मजबूरी में इस बात पर विचार भी कर सकते थे, परंतु अब शादी की तारीख तय हो जाने के पश्चात् हमारी बिरादरी में नाक कट जाएगी। उन्होंने आगे यह भी कह दिया कि 'बिरादरी में अपना घोर अपमान करवा कर उनके जीवित रहने का कोई औचित्य नहीं बनता है।'

उनकी सारी बातें सुनने के पश्चात् मैंने पूजा से मनोवैज्ञानिक ढंग से बातचीत करना शुरू किया। पहले पहल तो वह बिल्कुल भी सहयोग नहीं कर रही थी। मामले को सुलझाने के लिए मैंने पूजा से सवाल किया कि 'क्या वह मनोज से शादी करना चाहती है?' उसने हां में सिर हिला दिया। फिर मैंने सवाल किया कि क्या मनोज भी तेरे साथ शादी के लिए तैयार है? उसने अनमने में जवाब दिया, 'हां वह भी तैयार हो ही जाएगा।' मैंने फिर से सवाल किया, 'तुमने मनोज से अपने साथ शादी करने के बारे में बात की है?' उसने नहीं में सिर हिला दिया। फिर मैंने उससे मनोज का मोबाइल नंबर पूछा तो उसने एकदम से नंबर बता दिया। फिर मैंने अपने मोबाइल से मनोज को फोन मिलाकर पूजा को उससे शादी के बारे में हां अथवा ना जानने के बारे में पूछने के लिए प्रेरित किया। जब पूजा ने उससे घर वालों के विरुद्ध जा कर शादी करने के बारे में कहा तो वह साफ इनकार कर गया। वह साफतौर पर कहने लगा कि प्यार-मोहब्बत और मौज-मस्ती तो अलग बात है परंतु शादी तो वह अपने मां-बाप की सहमति से ही करेगा। उसने आगे यह भी कह दिया कि उसके मां-बाप किसी गैर जाति में उसकी शादी बिल्कुल भी नहीं होने देंगे। उसकी ऐसी बातें सुनकर पूजा के पांवों के नीचे जमीन सरक गई। उसकी आंखों से आंसुओं की धार बहने लग गई।

पूजा के मन में पश्चाताप की भावना को देख मैंने मनोवैज्ञानिक काऊंसलिग द्वारा उसे अपने अतीत को भूल कर अपने भविष्य को सुखमय बनाने के सुझाव दिये। उसने मेरी बातों से पूर्ण सहमति प्रदान की तथा अपने मां-बाप की इच्छा के अनुरूप प्रत्येक कार्य करने का संकल्प लिया। उसके बाद पूजा को कभी भी दौरा नहीं पड़ा और न ही उसके सिर पर फिर कभी कोई कथित भूत-प्रेत आ कर बोलने की कुचेष्टा कर सका। मां-बाप की इच्छा के अनुसार नियत तारीख पर पूजा की शादी संपन्न हो गई और अब लगभग सात महीने बीत चुके हैं। वह अपने ससुराल में सुखमयी जीवन व्यतीत कर रही है। पूजा से कुशल-मंगल के बारे में उसके पिता सुभाष का धन्यवादी फोन मेरे पास समय-समय पर आता रहता है।

विश्लेषण:

जब तक पूजा का रिश्ता तय नहीं हुआ था तब तक उसे कभी कोई परेशानी नहीं हुई थी। वास्तव में ठेकेदार मनोज और पूजा एक दूसरे को वासनात्मक तौर पर चाहने लगे थे। दोनों में एक दूसरे से मिल कर अपनी शारीरिक भूख मिटाने की इच्छा हिलोरें मारने लगी थी। एक दिन काम करते हुए पूजा के सिर में थोड़ा-थोड़ा दर्द होने लगा था। अत: वह पंखे के नीचे बैठ कर आराम कर रही थी। जब मनोज को पता चला तो वह उसे दवाई दिलवाने के लिए अपने साथ ले गया। फिर उसे दवाई दिलवा कर अपने एक दोस्त के होटल में ले गया। दोस्त से होटल का एक कमरा खुलवा कर पूजा को वहां आराम करने के लिए कह कर वह बाजार में अपने काम निपटाने के लिए चला गया। थोड़ी ही देर में वह होटल में वापिस आ गया। अब कमरे में वे दोनों अकेले ही थे और प्रेम पूर्वक बाते करते-करते वे एक दूसरे में खो गये। भावावेश में आकर दोनों ने मर्यादा की सीमाएं लांघते हुए आपस में शारीरिक संबंध कायम कर लिए। उसके बाद तो जब भी उन का मन करता वे दोनों किसी न किसी बहाने से कार्य स्थल से निकल कर होटल में आ जाते और अपनी शारीरिक भूख मिटा लेते।

परंतु समस्या तब खड़ी हो गई जब पूजा की मां ने भी भी वहां पर मजदूरी करने के लिए आना शुरू कर दिया। अब उन दोनों को अपनी मनमर्जी करने का अवसर नहीं मिलता था। इसीलिए अब पूजा के व्यवहार में बदलाव आने लगा। अब वह चुपचाप सी रहने लग गई। इसीलिए जब पूजा को अपनी भावनाओं पर नियंत्रण रख पाना कठिन हो जाता तो उसे चक्कर आने शुरू हो जाते। जब उसके आवेग नियंत्रण से

बाहर हो जाते तो उसे दौरा पड़ जाता। दौरा पड़ने पर लड़कियां उसे उठा कर मनोज के दफ्तर में ले जातीं। वर्करों की अत्यधिक आवाजाई होने के कारण दोनों शारीरिक संबंध बना पाना असंभव था। इसीलिए पूजा को क्रोध भी अधिक आना शुरू हो गया और उसे दौरे भी बहुत ज्यादा पड़ने शुरू हो गये। जब उसे डाक्टरों के पास ले जाया गया तो जांच-पड़ताल में उस में कोई शारीरिक रोग नहीं पाया गया।

परंतु अब जब कथित भूत-प्रेत पूजा के सिर पर आकर बोलने लगे और उसे अपने साथ ले जाने की धमकी देने लगे तो घर वाले उसे बाबाओं, तांत्रिकों के पास लेकर गये। इसी क्रम में वे उसे काली माता की चौकी लगाने वाली भक्तिनी के पास भी ले गये। भक्तिनी द्वारा पूजा को धागा बांध कर आशीर्वाद देने के पश्चात् उस का काफी हद तक ठीक हो जाना और फिर अपने काम पर जाना शुरू कर देने के पीछे वास्तविक कारण यह था कि मनोज ने पहले से ही उस भक्तिनी के पांच लाख के लोन पर अपनी गारण्टी दी हुई थी। अत: वह भक्तिनी एक तरह से मनोज की अहसानमंद थी। मनोज ने फोन कर के अपने एवं पूजा के संबन्धों की जानकारी भक्तिनी को पहले से ही दे दी थी। जब भक्तिनी ने पूजा का झाड़ा लगा कर उसे धागा-ताबीज देते समय उसे मनोज से मिलवाने की गारण्टी दी तो पूजा की खुशी का कोई ठिकाना न रहा। इसीलिए वह ठीक-ठाक हो कर काम पर जाने लग गई थी।

मगर जब उसकी शादी की तारीख तय कर दी गई तो पूजा को लगा कि अब पानी सिर से ऊपर चढ़ आया है। फिर एक दिन अपने काम पर जा कर उसने मनोज के साथ तालमेल किया और बता दिया कि उसकी शादी तय कर दी गई है, परंतु वह वहां पर शादी नही करेगी, वह घर छोड़ कर मनोज के साथ भाग जाएगी। मनोज भी मौजमस्ती करने का आदी हो चुका था। उन दोनों ने उसी रात घर से भागने की योजना बना ली। योजना के अनुसार पूजा रात को अपने घर से चुपचाप निकल आई। बाहर गली में मनोज पहले से ही अपना मोटरसाइकिल ले कर खड़ा था। वह पूजा को लेकर अपने दोस्त के होटल में आ गया। दिन में तो मनोज अपने काम की देखरेख मे व्यस्त रहता था परंतु सारी रात वह होटल के कमरे में पूजा के साथ रंगरलियां मनाते हुए गुजारता था। पूजा के साथ चार दिन तक लगातार रंग-रलियां मना कर जब मनोज की हवस का खुमार ठण्डा पड़ गया तो उसने पूजा को पुलिस का डर दिखा कर उसके घर वापिस भेज दिया।

अब घर में उस पर बहुत सी पाबंदियां लगा दी गई। उसका काम पर जाना बन्द करवा दिया गया तथा उसका मोबाइल भी छीन लिया गया। पूजा की मां की आस्था उस भक्तिनी पर बनी हुई थी, अत वह अगली चौकी पर फिर से पूजा को वहां पर ले गई। इस बार भक्तिनी ने विशेष झाड़ा लगाने के नाम पर पूजा को अपने निजी कमरे में अकेली को बुला लिया। उस कमरे में भक्तिनी ने पूजा को मनोज द्वारा दिया गया मोबाइल दे दिया और फोन पर उसकी मनोज के साथ बात भी करवा दी। इसलिए जब पूजा 'झाड़ा' लगवा कर कमरे से बाहर निकली तो वह अत्यन्त प्रसन्न दिखाई दे रही थी।

अब वह रोजाना रात के समय अपनी चारपाई पर लेटी हुई कम्बल में मुंह छिपा कर मनोज से बातें किया करती थी। फोन पर समय निश्चित कर के एक रात पूजा अपने घर की चार दीवारी की दीवार फांद कर घर से भाग गई। आगे मनोज उसे मोटर साईकिल पर बिठा कर अपने दोस्त के होटल में ले गया। अब फिर से वह दिन में अपने काम पर आ जाता और रात को होटल के कमरे में पूजा के साथ रंगरलियां मनाता रहता। संयोगवश अकेलपन से उक्ता कर पूजा अपने कमरे से बाहर निकल कर होटल में घूम फिर रही थी, उसी समय सुभाष का एक टैक्सी ड्राईवर दोस्त किसी सवारी को होटल में छोड़ने के लिए पहुंच गया। उसने पूजा को पहचान लिया अैर सुभाष को इस बारे फोन द्वारा सूचित कर दिया। फिर थाने में जाने पर मनोज पर विश्वास कर के उसने ब्यान में लिख कर दे दिया कि वह बालिग है और अपनी मर्जी से मनोज के साथ घर से चली आई है। वह तो यह ही समझती थी कि मनोज उसे बहुत अधिक प्यार करता है और उससे शादी भी करना चाहता है परंतु जब मैंने पूजा की फोन पर मनोज से शादी करने के बारे साफ-साफ बात करने को कहा तो मनोज पूरी तरह से मुकर गया। तब जा कर पूजा की आंखें खुलीं। वह गलत रास्ते को त्याग कर सही रास्ते पर आ गई।

(नोट: यह एक सत्य घटना है। परिस्थितिवश पात्रों के नाम बदल दिये गये हैं।)

दंगा

इस बार दंगा बहुत बड़ा था
खूब हुई थी,
खून की बारिश
अगले साल अच्छी होगी फसल
मतदान की

– **गोरख पांडे**

कहानी

पार्टीशन

स्वयं प्रकाश
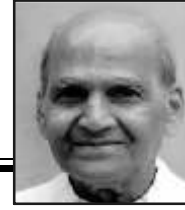
आप कुर्बान भाई को नहीं जानते? कुर्बान भाई इस कस्बे के सबसे शानदार शख़्स हैं। कस्बे का दिल है। आजाद चौक पर कुर्बान भाई की छोटी सी किराने की दुकान है। यहाँ हर समय सफेद कमीज़-पजामा पहने दो-दो, चार-चार आने का सौदा-सुलफ मांगती बच्चों-बड़ों की भीड़ में घिरे कुर्बान भाई आपको नज़र आ जाएंगे। भीड़ नहीं होगी तो उकड़ूँ बैठे कुछ लिखते होंगे।

बार-बार मोटे फ्रेम के चश्मे को उंगली से ऊपर चढ़ाते और माथे पर बिखरे आवारा, अधकचरे बालों को दाएं या बाएं हाथ की उंगलियों में फंसा पीछे सहेजते। यदि आप यहां से सौदा लेना चाहें तो आपका स्वागत है। सबसे वाजिब दाम और सबसे ज्यादा सही तौल और शुद्ध चीज़। जिस चीज़ से उन्हें खुद तसल्ली नहीं होगी, कभी नहीं बेचेंगे। कभी धोखे से दुकान में आ भी गई तो चाहे पड़ी-पड़ी सड़ जाए, आपको साफ मना कर देंगे। मिर्च? आपके लायक नहीं है। रंग मिली हुई आ गई है। तेल? मजेदार नहीं है। रेपसीड मिला है। दीया-बत्ती के लिए चाहें तो ले जाएं।

यही वजह है कि एक बार जो यहां से सामान ले जाता है, दूसरी बार और कहीं नहीं जाता। यों चारों तरफ़ बड़ी-बड़ी दुकाने हैं सिंधियों की, मारवाड़ियों की, पर कुर्बान भाई का मतलब है, ईमानदारी। कुर्बान भाई का मतलब है, उधार की सुविधा और भरोसा। कॉपी रख लें, शेर होते ही फ़ौरन उनमें दर्ज कर लें। कुर्बान भाई सुनते हैं, सहमत भी हो जाते हैं, जो चीज़ें खो गई उन पर दुखी भी होते हैं, पर करते वही हैं।

मेरा भी इस शानदार आदमी से इसी तरह परिचय हुआ। दफ्तर से लौटते हुए कुर्बान भाई की दुकान से कोई चीज़ लेकर घर आया....लिफाफे पर लिखा था-

फ़क़त पासे-वफ़ादारी हैं, वरना कुछ नहीं मुश्किल
बुझा सकता हूँ अंगारे, अभी आंखों में पानी है।

और यह आदमी आज भी चार-चार आने के सौदे तौल रहा है! और क्यों तौल रहा है, इसकी भी एक कहानी है।

कुर्बान भाई के पिता का अजमेर में रंग का लंबा-चौड़ा कारोबार था। दो बड़े-बड़े मकान थे। हवेलियां कहना चाहिए। नया बाजार में खूब बड़ी दुकान थी। बारह नौकर थे। घर में बग्घी तो थी ही, एक 'बेबी ऑस्टिन' भी थी जो 'सैर' पर जाने के काम आती थी। संयुक्त परिवार था। पिता मौलाना आजाद के शैदाइयों में से थे। बड़े-बड़े लीडर और शायर घर आकर ठहरते थे। कुर्बान भाई उस वक्त अलीगढ़ यूनिवर्सिटी में पढ़ रहे थे। न भविष्य की चिंता थी न बुढ़ापे का डर! मजे से जिंदगी गुज़र रही थी। इश्क, शायरी, होस्टल, ख्वाब!

तभी पार्टीशन हो गया। दंगे हो जाए। दुकान जला दी गई। रिश्तेदार पाकिस्तान भाग गए, दो भाई कत्ल कर दिए गए। पिता ने सदमे से खटिया पकड़ ली और मर गए। नौकर घर की पूंजी लेकर भाग गए। बचे-खुचों को लेकर अपनी जान लिए-लिए कुर्बान भाई नागौर चले गए। वहां से मेड़ता, मेड़ता से टौंक। कहां जाएं? कहां सिर छिपाएं? क्या पाकिस्तान चले जाएं? नहीं गए। क्योंकि जोश नहीं गए, क्योंकि सुरैया नहीं गई, क्योंकि कुर्बान भाई को अच्छे लगने वाले बहुत से लोग नहीं गए। तो कुर्बान भाई क्यों जाते?

धीरे-धीरे घर की बिकने लायक चीज़ें सब बिक गई और कहीं कोई काम, नौकरी नहीं मिली, जो उस दौर में मुसलमानों को मिलना बेहद मुश्किल थी। हुनर कोई जानते नहीं थे, तालीम अधूरी थी। आखिर एक सेठ के यहाँ हिसाब लिखने का काम करने लगे, लेकिन अपनी आदर्शवादिता, ईमानदारी, दयानतदारी, शराफ़त आदि 'दुर्गुणों' के कारण जल्द ही निकाल दिए तो शक-शुबहे की बर्छियों से छेद-छेद दिए जाते और मुसलमानों में खपने की कोशिश करते तो लीगियों के धार्मिक उन्माद का जवाब देते-देते टूक-टूक हो जाते। उतरते गए... मज़दूरी तक, हम्माली तक, छुटपुट कारीगरी तक... इंसानियत तक।

नए-नए काम सीखे। मजबूरी सिखा ही देती है। साइकिल के पंक्चर जोड़े, पीपों-कनस्तरों की झालन लगाई, ताले-छतरियां, लालटेनें ठीक कीं। चूनरी-बंधेज की रंगाई में काम किया....हाथी दांत की चूड़ियां काटीं....शहर दर शहर....अब हमला सिर्फ सांप्रदायिक उन्माद का नहीं, मशीन का हो रहा था। जो चीज पकड़ते....धीरे-धीरे हाथ से फिसलने लगती।

धक्के खाते-खाते पता नहीं कब कैसे यहां इस कस्बे में आ गए और एक बुजुर्ग नमाज़ी मुसलमान से पचास रुपए उधार लेकर एक दिन यह दुकान खोल बैठे।

कुछ पुड़ियों में दाल-चावल....माचिस....बीड़ी-सिगरेट-गोली-चॉकलेट। क्या बताऊँ? किस तरह बताऊ, एक आदमी के दर्द और संघर्ष की तवील दास्तान का सिर्फ अपनी सुविधा के लिए चंद अल्फाज़ में निबटा देना....न सिर्फ ज्यादती हैं, बल्कि उस संघर्ष का अपमान, उसका मज़ाक उड़ाने जैसा भी है। पर क्या करूँ, कहानी जो कहने जा रहा हूँ-दूसरी है।

दुकान के ज़रा जमते ही कुर्बान भाई ने अखबार खरीदना और पत्रिकाएं मंगाना शुरू कर दिया। ठीया हो गया, पहनने को दो जोड़ी कपड़े हो गए, रोटेशन चल गया, गिराकी जम गई तो आगे ख्वाहिश कौन सी थी? बच्चे कोई जिए नहीं थे, शौक-मौज, सैर-सपाटा भूल ही चुके थे, मियां-बीवी दो जनों के लिए बहुत था....पत्रिकाएं क्यों न मंगाते? और उस समय कोई पत्रिका आती तो बुकपोस्ट हो या वी.पी., उसे लेने कुर्बान भाई खुद पोस्ट ऑफिस पहुंच जाते। पत्रिका को बड़े यतन से संभालकर रखते और उसका पन्ना-पन्ना, हर्फ़-हर्फ चाट जाते। कई-कई बार, जैसे किसी भूखे-प्यासे को छप्पन भोग मिल गए हों। अदब से अब भी इसी तरह मोहब्बत करते हैं। पत्रिकाएं मंगाकर, खरीदकर पढ़ते हैं और उनकी फाइल हिफ़ाज़त से रखते हैं।

इसी सिलसिले में उनके संस्कार बोलने लगे। लोगों ने देखा, यह शख्स कभी झूठ नहीं बोलता....ठगी, चार सौ बीसी नहीं करता....कम नहीं तौलता.... अबे-तबे नहीं करता....गंदे मज़ाक नहीं करता, अदब से बोलता है। और आड़े वक्त पर हरेक के काम आता है, हर काम में इसके एक नफ़ासत संस्कारिता छलकती है। इसलिए धीरे-धीरे कस्बे में प्रतिष्ठित लोग दुआ-सलाम करने लगे। व्यापारियों के यहां शादी-ब्याह कुछ होता....उनके कार्ड आने लगे। आकर्षित होकर खग के पास खग भी आने लगे। अब कुर्बान भाई उन्हें चाय पिला रहे हैं और ग्राहकी छोड़कर गालिब पर बहस कर रहे हैं।

आहिस्ता-आहिस्ता कुर्बान भाई की दुकान पढ़े-लिखों का अड्डा बन गई। लेक्चरर, अध्यापक, पत्रकार, पढ़ने-लिखने वाले। शाम होते ही कुर्बान भाई की दुकान ठहाकों और बहसों से गुलज़ार हो जाती। कुर्बान भाई आदाब अर्ज करते चाय वाले को चाय के लिए आवाज़ लगाते हैं और टाट की कोई बोरी निकालकर चबूतरे पर बिछा देते। ग्राहकी भी चलती रहती, बहसें भी, ठहाके भी। अखबार का संवाददाता उकड़ूँ बैठकर चबूतरे के नीचे रखी बोरी से मुलतानी मिट्टी निकाल रहा है या इतिहास के वरिष्ठ अध्यापक....

हम लोगों के संपर्क से कुर्बान भाई बदलने लगे। उन्हें पहली बार महसूस हुआ कि उनकी एक अदबी शख़्सियत भी है। हमने उनसे उर्दू सीखी, उनकी लाईब्रेरी (जो काफी समद्ध हो गई थी) को तरतीब दी, रिसालों की जिल्दें बनवाई और उस लाइब्रेरी का खूब लाभ उठाया। हम लोग कुर्बान भाई को पकड़-पकड़कर मुशायरों-नशिस्तों में ले जाने लगे। हमने उन्हें ऐसी पत्रिकाएं दिखाई, जैसी उन्होंने पहले कभी नहीं देखी थीं....ऐसे लेखकों-कवियों के बारे में बताया जो सिर्फ उनकी कल्पना में ही थे....ऐसे शायरों की रचनाएं सुनाई जो साकी-शराब वगैरह को कब का अलविदा कर चुके थे और ऐसी राजनीति से उनका परिचय कराया, जिसके बारे में उन्होंने अब तक सिर्फ उड़ती-उड़ती बातें ही सुनी थीं। उनके दिमाग में भी काफी मज़हबी कबाड़ भरा हुआ था, शुरू में प्रबुद्ध होने के बावजूद, हम झाड़ू लेकर....पिल पड़े, हमने उन्हें अखबार और विचार का चस्का लगा दिया, जैसा पहले किसी ने करना जरूरी नहीं समझा था।

नतीजा यह निकला कि वे हफ्ते में एक रोज़ छुट्टी रखने लगे, रात को खाने के बाद हमारे साथ घूमने जाने लगे। अपने अतीत के बारे में सोच-सोचकर गुस्से में भरे रहने के बजाय भविष्य की तरफ़ देखकर कभी-कभी चहकने भी लगे और हमारे नज़दीक से नज़दीकतर होने लगे। एक नए किस्म का लौंडापन उन पर चढ़ने लगा। उन्हें हमारी लत पड़ने लगी। वे हमारा हर शाम इंतजार करते और हम नहीं पहुंचे पाते तो वे खुद हमारे घर आ जाते।

अब हुआ यह भी, कस्बे के शरीफ़ और प्रतिष्ठित व्यक्ति होने की कुर्बान भाई की ख्याति से हमें लाभ न हुआ हो,

स्वयं प्रकाश

स्वयं प्रकाश हिन्दी साहित्यकार हैं। वे मुख्यत: हिन्दी कहानीकार के रूप में विख्यात हैं। कहानी के अतिरिक्त उन्होनें उपन्यास तथा अन्य विधाओं को भी अपनी लेखनी से समृद्ध किया है। वे हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में साठोत्तरी पीढ़ी के बाद के जनवादी लेखन से सम्बद्ध रहे हैं।

हमारी बदनामी की लपेट में वे भी आने लगे। जिस परिमाण में कुर्बान भाई का जो समय हमें मिलता, उसी परिमाण में वह उनके पुराने दोस्तों-लतीफ़ साहब, हाजी साहब, इमाम साहब वगैरह के हिस्से में कम हो जाता। नमाज़ पढ़ने वे सिर्फ शुक्रवार को जाते थे, अब वह भी बंद कर दिया। वाज़ वगैरह में चलने को कोई पहले भी उनसे कहीं कहता था, अब भी नहीं कहता। मदरसे को पहले भी चंदा देते थे, अब भी देते। हाँ, कभी-कभी होने वाली राजनीतिक सभाओं में जाने को और कस्बे की राजनीति में दिलचस्पी लेने को उनके लिए खतरनाक समझकर बिरादरी वाले उन्हें टोकने ज़रूर लगे। पॉलिटिक्स अपने लोगों के लिए नहीं है, समझे? चुपचाप सालन-रोटी खाओ और अल्लाह का नाम लो। चैन से जीना है तो इन लफड़ों में मत पड़ों। बेकार कभी धर लिए जाओगे....हमें भी फंसवाओगे। अब यहां रहना ही है तो....पानी में रहकर मगरमच्छों को मुंह चिढ़ाने से क्या फायदा?

लेकिन अपनी मस्ती में मस्त थे हम लोग। न हमें पता चला न खुद कुर्बान भाई को कि उन्हें इमामबाड़े वाले ही नहीं, शाखा वाले भी घूरते हुए निकलने लगे हैं। शाम को उनकी दुकान पर आने वाले देशप्रेमी किस्म के लोगों की सतत अनुपस्थिति का गूढ़ार्थ भी हमने नहीं समझा। इसलिए आख़िर वह घटना हो गई जिसने इस कहानी को एक ऐसे अप्रिय मुकाम तक पहुंचा दिया जो मन को कड़वाहट से भर देता है।

एक दिन दोपहर की बात है। एक बैलगाड़ी वाले ने ठीक गाड़ी दुकान के सामने रोकी। खड़ी की। अकसर बैल गाड़ी वाले वहां गाड़ी खड़ी कर, बैलों की चारा डालकर अपना काम-काज निपटाने चले जाते हैं। शाम को लौटते हैं और जोतकर चले जाते हैं लेकिन वे गाड़ी किसी की दुकान के ऐन सामने खड़ी नहीं करते और किसी के चबूतरे पर रखने का तो सवाल ही नहीं उठता। इस शख़्स ने तो इस तरह गाड़ी खड़ी की थी कि अब कोई ग्राहक कुर्बान भाई की दुकान तक पहुंच ही नहीं सकता था, बल्कि वे खुद भी पड़ोसी के चबूतरे पर से हुए बिना नीचे नहीं उतर सकते थे।

गाड़ी वाला वकील ऊखचंद का हाली था और कुर्बान भाई को मालूम था कि अभी वह गाड़ी खड़ी करके गया और शाम को ही लौटेगा। कुर्बान भाई ने उससे गाड़ी ज़रा बाजू में खड़ी करने और बैलों को किनारे बांध देने को कहा। उसने अनसुनी कर दी। कुर्बान भाई ने फिर कहा तो एक नज़र उन्हें देखकर अपने रास्ते चल पड़ा। कुर्बान भाई ने खुद उठकर चबूतरे पर टिके उसकी गाड़ी के अगले छोर को उठाया और गाड़ी को धकाकर....लेकिन तभी उस आदमी ने कुर्बान भाई का गरेबान पकड़ लिया और गालियां बकने लगा। और कुर्बान भाई का चश्मा नोच लिया और धक्का-मुक्की करने लगा। ठीक इसी समय कोर्ट से लौटते वकील ऊखचंद उधर से गुजरे और उन्होंने आवाज़ मारकर पूछा, ''क्या हुआ रे गोम्या?''

गोम्या बोला, ''म्हने कूटै!'' यानी मुझे मार रहा है।

वकील ऊखचंद ने पूछा, ''कौन?''

''गोम्या बोला, ''ये मींयों!''

कुर्बान भाई सन्न रह गए। बात समझ में आते-आते भीतर हचमचा गए। आंखों के आगे तारे नाचने लगे। वहीं जमीन पर उकड़ूँ बैठ गए। और सिर पकड़ लिया। अंधेरे का एक ठोस गोला कलेजे से उठा और हलक में आकर फंस गया। बरसों से जमी रुलाई एक साथ फूट पड़ने को जोर मारने लगी।

यह क्या हुआ? कैसे हुआ? क्या गोम्या उन्हें जानता नहीं? एक ही मिनट में वह 'कुर्बान भाई' से 'मियां' कैसे बन गए? एक मिनट भी नहीं लगा। बरसों से तिल-तिल मरकर जो प्रतिष्ठा उन्होने बनाई....हर दिन हर पल जैसे एक अगिन-परीक्षा से गुजरकर, जो सम्मान, जो प्यार अर्जित किया....हर दिन खुद को समझाकर....कि पाकिस्तान जाकर भी कोई नवाबीं नहीं मिल जाती....जैसे हैं यही मस्त हैं। अल्लाह सब देखता है। जाने दो जोश को, डूबने दो सुरैया का सितारा....भुला देने दो दोस्तों को....लुट जाने दो कारोबार को....झूठे बदमाशों....के कब्जे में चली जाने दो हवेलियां....गुमनाम पड़ी रहने दो भाइयों की कब्रें, दफ़ना दो भरे-पूरे घर का सपना....शायद कभी फिर अपना भी दिन आए....तब तक सब्र कर लो....क्या-क्या कीमत रोज़ चुकाकर कस्बे में थोड़ा सा अपनापन....थोड़ी सी सामाजिक सुरक्षा, थोड़ा सा आत्म-विश्वास....थोड़ी सी सहजता उन्होंने अर्जित की थी....और कितनी बड़ी दौलत समझ रहे थे इसको....और लो! तिल-तिल करके बना पहाड़ एक फूक में उड़ गया! एक जाहिल आदमी....लेकिन जाहिल वो है या मैं? मैं एक मिनट-भर में 'कुर्बान भाई' से 'मियां' हो जाऊंगा यह कभी सोचा क्यों नहीं? अपनी मेहनत का खाते हैं। फिर भी ये लोग हमें अपनी छाती का बोझ ही समझते हैं। यह बात कभी नजर क्यों नहीं आई? पाकिस्तान चले जाते....तो लाख गुर्बत बर्दाश्त कर लेते....कम से कम ऐसी ओछी बात तो नहीं सुननी पड़ती। हैफ़ है! धिक्कार है! लानत है ऐसी जिंदगी पर!

अल्लाह! या अल्लाह!

वकील ऊखचंद गोम्या हाली को समझाते-बुझाते साथ ले गए। गाड़ी-बैल वहीं छोड़ गए। अड़ोसियों-पड़ोसियों ने कुर्बान भाई को संभाला। उनकी बत्तीसी भिंच गई थी और होठों के कोनों से झाग निकल रहे थे। लोगों ने गाड़ी-बैल हटाए। कुर्बान भाई को चबूतरे पर लिटाया! हवा की! मुंह पर ठंडे पानी की छींटे दिए। वकील ऊखंचद को गालियां दी। कुर्बान भाई को आश्वस्त करने का प्रयतन किया। उन्हें क्या मालूम था, कुर्बान भाई, के भीतर पर टूट गया? अभी-अभी। जिसे उन्होंने इतने बरस नहीं टूटने दिया था। अंदर की चोट दिखाई कहां देती है?

लोग इकट्ठे हो गए। सारे कस्बे में खबर फैल गई। जिस-जिस को पता चलता गया, आता गया। हम लोग भी पहुंच गए। अब बीसियों लोग थे और यह बदतमीजी चुपचाप बर्दाश्त नहीं करनी चाहिए। थाने में रपट लिखानी चाहिए।

लिहाजा चला जुलूस थाने।....पर रास्ते में किसी को पेशाब लग गया, किसी को हगास। थाने पहुंचते-पहुंचते सिर्फ हम लोग रह गए कुर्बान भाई के साथ।

थानेदार नहीं थे। अभी-अभी मोटर साइकिल लेकर कहीं निकल गए। मुंशी था। मुंशी ने रपट लिखने से साफ इंकार कर दिया। क्यों न करता? थानेदार के पास पहले ही वकील ऊखंचद का टेलीफोन आ चुका था। वकील ऊखचंद सत्ता पार्टी के जिला मंत्री थे। कुर्बान भाई कौन थे? हम लोग कौन थे?

आधे घंटे तक हुज्जत और डेढ़ घंटे तक थानेदार की प्रतीक्षा करने के बाद अपना सा मुंह लेकर लौट आए। शाम को फिर आएंगे। शाम को हम लोगों के सिवा दुकान पर कोई नहीं पहुंचा। और हम लोगों के साथ थाने चलने का ज़रा भी उत्साह कुर्बान भाई ने नहीं दिखाया। दुकानदारी ने उन्हें जैसे एकदम व्यस्त कर लिया, जैसे हमसे बात करने का भी समय नहीं।

एक अपराध-बोध के तहत हम भी कुर्बान भाई से कटे-कटे रहने लगे। हालांकि घटना इतनी बड़ी नहीं थी, जिसे तूल दिया जाए। थानेदार तो क्या....कोई भी होता....खुद पुलिस-उलिस के चक्कर में पड़ने की बजाय जो हो गया, उसे एक जाहिल आदमी की मूर्खता मानकर भूल जाने को तैयार हो जाता। पर हम....हमें लग रहा था....हमारे दोस्त पर हमला हुआ और हम कुछ नहीं कर सके, किसी काम नहीं आ सके। यह भी लग रहा था कि ज्यादा उत्साह दिखाया तो कुर्बान भाई के लिए और मुसीबतें खड़ी हो जाएंगी, हम कुछ नहीं कर पाएंगे। यह भी लग रहा था कि जो हुआ, उसमें पुलिस से हस्तक्षेप और सहायता की उम्मीद बेकार है। इसका मुकाबला राजनीतिक स्तर पर ही किया जा सकता है, जिसके लिए जल्दी से जल्दी अपनी शक्ति बढ़ानी चाहिए, पांच से पचास हो जाना चाहिए।

लेकिन यह सब बहाने बाज़ी थी। यह सच है कि कुर्बान भाई को एकदम अकेला छोड़ दिया था। शायद हम उनकी तकलीफ को शेयर कर ही नहीं सकते थे, पर हमें कोशिश ज़रूर करनी चाहिए थी।

कुर्बान भाई की दुकान पर कई दिन पहले का सा रंगतदार जमावड़ा नहीं हुआ। वह बुझे-बुझे से रहते थे, बहुत कम बोलते थे और हमें देखते ही दुकानदारी में व्यस्त हो जाते थे। वे घुट रहे थे और घुल रहे थे....पर खुल नहीं रहे थे। हम उन्हें नहीं खोल पाए। एक दिन जब मैं पहुंचा, मेरी तरफ उनकी पीठ थी, किसी से कह रहे थे-''आप क्या खाक हिस्ट्री पढ़ाते हैं? कह रहे हैं पार्टीशन हुआ था! हुआ था नहीं, हो रहा है, जारी है....'' और मुझे देखते ही चुप होकर काम में लग गए।

इस कहानी का अंत अच्छा नहीं है। मैं चाहता हूँ कि आप उसे नहीं पढ़ें और पढ़े तो यह ज़रूर सोचें कि क्या इसका कोई और अंत हो सकता था? अच्छा अंत? अगर हां, तो कैसे?

बात बस यह बची है कि कई दिन बाद जब एक दोपहर में आजाद चौक से गुजर रहा था जिसका नाम अब संजय चौक कर दिया गया था-और वह शुक्रवार का दिन था-मैने देखा कि कुर्बान भाई की दुकान के सामने लतीफ भाई खड़े हैं....और कुर्बान भाई दुकान में ताला लगा रहे हैं....और उन्होंने टोपी पहन रखी है....और फिर दोनों मस्जिद की तरफ चल दिए हैं।

कुर्सीनामा

कुर्सी ख़तरे में हैं तो प्रजातंत्र ख़तरे में है
कुर्सी ख़तरे में है तो देश ख़तरे में है
कुर्सी ख़तरे में है तो दुनीया ख़तरे में है
कुर्सी न बचे तो भाड़ में जाये प्रजातंत्र
देश और दुनीयां ।

- गोरख पाण्डेय

भारत हिंदू राष्ट्र बनने के रास्ते पर

- मुनेश त्यागी

भारत के स्वतंत्रता संग्राम में तीन विभिन्न विभिन्न ताकतों के बीच भारत का भविष्य बुनने और बनाने की मुहिम जारी थी। पहली ताकत कांग्रेस थी जो अंग्रेजों से भारत को मुक्त कराकर भारत को अंग्रेजों की गुलामी से आजाद करा कर भारत में स्वराज कायम करना चाहती थी।

दूसरी तरफ से भारत का कम्युनिस्ट खेमा और भगत सिंह और चंद्रशेखर आजाद के नेतृत्व में हिंदुस्तानी समाजवादी गणतंत्र संघ का क्रांतिकारी शहीदों का खेमा था जो गुलाम भारत को साम्राज्यवादी लुटेरे अंग्रेजों से आजाद कराकर भारत में समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, जनतांत्रिक और गणतांत्रिक व्यवस्था कायम करना चाहता था।

तीसरी ताकतें हिंदू और मुसलमान भारत की एकता और अखंडता को खंडित करने के रास्ते पर चल रही थीं। ये ताकतें भारत में हिंदू मुस्लिम विभाजन के लिए 1906 से ही काम कर रही थीं। अंग्रेज इस मुहिम को आगे बढ़ा रहे थे और हिंदू मुसलमान के नाम पर पार्टियां गठित कर रहे थे। 1925 में सांप्रदायिक आधार पर आर एस एस का निर्माण किया गया जो अपने बनने के समय से ही भारत की एकता को सांप्रदायिक आधार पर खंडित करके साम्राज्यवादी लुटेरों का साथ दे रही थी। यही काम मुस्लिम लीग जिन्ना के नेतृत्व में 1939 से कर रही थी।

1923 में वी डी सावरकर ने एक निबंध लिखा जिसका नाम ''हिंदुत्व'' था जिसमें उसने अवधारित किया कि ''यहां दो राष्ट्र हैं, एक हिंदू और दूसरा मुसलमान, ये दोनों एक साथ नहीं रह सकते।'' सावरकर अपनी सारी जिंदगी इसी सिद्धांत पर कार्य करता रहा। 1925 के बाद, अपनी स्थापना के समय से ही आर.एस.एस. ने यही विभानकारी एजेंडा अपना लिया और पहले आजादी के आंदोलन में वे लुटेरों अंग्रेजों के साथ थे और आज यह ताकतें पूंजीवादी ताकतों, धन्नासेठों और पैसे वालों के साथ हैं। उनके लुटेरे साम्राज्यवादी निजाम को बनाए रखने और उन्हीं का मुनाफा बढ़ाने का काम कर रही हैं और आज तो यह चाहते सत्ता में है अत: खुलकर हिंदुत्व की नीतियों को लागू कर रही हैं।

जब 1950 में भारत का संविधान लागू किया गया तो ये हिंदुत्ववादी ताकतें तब भी भारत के संविधान का और तिरंगे का विरोध कर रही थीं। इनका मानना था कि भारत में किसी संविधान को लागू करने की जरूरत नहीं है। यहां पर तो पहले से ही मनुस्मृति लागू है। मनुस्मृति के रहते किसी अन्य संविधान की जरूरत नहीं है। ये हिंदुत्ववादी ताकतें पहले से चली आ रही वर्ण व्यवस्था ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र की हामी थीं। मनुस्मृति के अनुसार शूद्रों, दलितों, और तमाम किसानों मजदूरों को पढ़ने, धन रखने का अधिकार नहीं था। उन्हें शस्त्र धारण करने का भी अधिकार नहीं था। बस उनका काम केवल ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य की सेवा करना था, उनकी गुलामी करना था, उनकी दासता करना था।

ये मनुवादी ताकतें आजादी के बाद से ही इन्हीं नीतियों को लागू करने की अलंबरदार रही हैं। उन्होंने प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से आरक्षण का विरोध किया है। ये ताकतें तब भी हिंदू राष्ट्र कायम करने का काम कर रही थी और आज भी हिंदुत्ववादी सांप्रदायिक ताकतों के 84 संगठन भारत में हिंदू राष्ट्र कायम करने की कोशिश कर रहे हैं। आज हकीकत यह है कि हिंदुत्ववादी ताकतें सबको शिक्षा, सब को काम, देने को तैयार नहीं हैं। आरक्षण को लगभग खत्म कर दिया गया है क्योंकि सरकारी क्षेत्र में नौकरियां खत्म कर दी गई हैं। आज जनता के लिए स्वास्थ्य, शिक्षा और सामाजिक सुरक्षा पर खर्च होने वाले बजट को लगातार कम किया जा रहा है, उसमें कटौती की जा रही है।

अब इन जन विरोधी ताकतों ने अपने मंसूबों को पूरा करने के लिए संवैधानिक और कानूनी प्रावधानों को भी ताक पर रख दिया है और अपनी साजिश को पूरा करने के लिए इन्होंने आई.ए.एस. जैसी परीक्षाओं को भी धता बता दिया है और अभी पिछले दिनों 40 आई.ए.एस. मनमाने ढंग से प्रमोटिड किए गए हैं जिन्हें यू.पी.एस.सी. की परीक्षा में शामिल नहीं होना पड़ा है और ये सारे के सारे नियुक्त किए गए लोग द्विज वर्ग के हैं। इनमें से कोई भी एस.सी., एसटी या ओबीसी वर्ग का व्यक्ति शामिल नहीं है। यह हिंदू **... शेष पृष्ठ 17 पर**

पगड़ी संभाल जट्टा आंदोलन के नायक-अजीत सिंह

- उषा निगम

पंजाब पुत्र अजीत सिंह जी का राजनीतिक जीवन संक्षिप्त लेकिन महत्वपूर्ण रहा. उन्हीं कुछ सालों में वे तूफान की तरह छा गए और फिर अपने उग्र विद्रोही विचारों की आंच को छोड़कर एक लंबी अवधि के लिए अपने गुलाम देश की सीमाओं से दूर चले गए, भारत को आजादी मिलने की खबर के साथ 14 मार्च 1947 को स्वदेश वापस आए, चौदह अगस्त 1947 की आधी रात को भारत की आजादी की घोषणा हो चुकी थी, सवेरे चार बजे अजीत सिंह जी ने अपने परिवार के बीच में कहा कि मेरी जिंदगी का मकसद पूरा हो गया। वे मृत हो गए।

अजीत सिंह जी का जन्म 23 फरवरी 1881 को खटकड़ कलां (जालंधर) में हुआ था। अर्जुन सिंह और जय कौर की वे दूसरी संतान थे। सिख होते हुए भी उनके पिता अर्जुन सिंह आर्य समाजी थे। पंजाब में वह आर्य समाज का दौर था। आर्य समाज का अर्थ था, धार्मिक, सामाजिक क्रांति, और स्वदेश प्रेम। भारतीय राजनीतिक परिवेश भी बदल रहा था। 1857 की सशस्त्र क्रांति के बाद देश को आजाद करने की अभिलाषा फिर से जोर पकड़ रही थी। साल 1905 के बंगाल विभाजन ने बंगाल में नई राजनीतिक चेतना को जन्म दिया। जागृति के इस तूफान ने पंजाब को भी प्रभावित किया। खुद पंजाब की अपनी स्थिति भी शांतिपूर्ण नहीं थी। भूमि स्वामित्व संबंधी कुछ कानूनों में, आबियाना (जल कर में वृद्धि और कोलोनाईजेशन बिल) के कारण पंजाब में अंसतोष फैल रहा था, इसका प्रधान कारण आर्थिक था और पंजाब का खेतिहर किसान वर्ग इससे बहुत प्रभावित था।

23 फरवरी 1881-15 अगस्त 1947

अजीत सिंह ने 1894 में मैट्रिक की परीक्षा पास की। फिर लाहौर के डी.ए.वी. कॉलेज में प्रवेश लिया, यही से उनमें राजनीति के प्रति सम्मान जगा, 'युगद्रष्टा भगत सिंह' की लेखिका वीरेंद्र सिंधु के अनुसार अजीत सिंह जी का लक्ष्य गुप्त क्रांतिकारी आंदोलन में भाग लेना नहीं था, उनका लक्ष्य तो 1857 जैसा संग्राम था और उनका काम खुली बगावत का गुप्त संगठन करना था। लॉर्ड कर्जन ने 1903 में अंग्रेज सरकार की शक्ति और भव्यता के प्रदर्शन के लिए दिल्ली-दरबार का आयोजन किया। इसमें देश के तमाम नरेशों और नवाबों को आमंत्रित किया गया था। इस अवसर का लाभ उठाकर अजीत सिंह ने नरेशों और नवाबों से भेंट की थी और उनको 1857 जैसी क्रांति के लिए प्रेरित करने का प्रयत्न किया था। बंगाल यात्रा के समय उनका संपर्क कुछ बंगाली क्रांतिकारियों जैसे जतींद्र मोहन चटर्जी (निरालंब बाबा) से भी उनकी मुलाकात हुई थी, लेकिन वे किसी गुप्त संगठन के सहभागी नहीं बने।

साल 1906 में कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में अजीत सिंह जी की भेंट लोकमान्य तिलक से हुई। तिलक पर उन का विशेष प्रभाव पड़ा। वे कलकत्ता से प्रकाशन आंदोलन का संकल्प लेकर वापस आए। उन्होंने निर्णय लिया कि वे पंजाब के किसानों के अंसतोष को सही दिशा और नेतृत्व देंगे। क्रांतिकारी सूफी अंबा प्रसाद के सहयोग से उन्होंने भारत माता सोसायटी की स्थापना की। किशन सिंह और स्वर्ण सिंह (अजीत सिंह के भाई) लाला लाल चंद फलक, मेहता नंद किशोर, लाला हरदयाल, केदार नाथ सहगल, लाला पिंडी दास, महाशय घसीटा राम आदि इसके प्रमुख सदस्य थे। भारत माता सोसायटी के दो शस्त्र थे: पहला भाषण और दूसरा प्रकाशन। सूफी अंबा प्रसाद पर प्रकाशन का दायित्व था। इसके लिए उन्होंने 'भारत माता बुक एजेंसी' स्थापित की। तमाम पत्र पत्रिकाओं, पुस्तकों के माध्यम से विद्रोही साहित्य का प्रकाशन किया गया।

भारत माता सोसायटी

भारत माता सोसायटी की ओर से जगह जगह सभाओं का आयोजन किया जाने लगा। इसमें भाषण देने का दायित्व अजीत सिंह जी का रहता था। पंजाब में 1907 के किसान आंदोलन को उनका कुशल नेतृत्व मिला। पूरे पंजाब के शहरों और गांवों में सभाओं सी बाढ़ सी आ गई। उनमें बड़ी संख्या में किसान और समाज के अन्य वर्गों के लोग भी भाग लेते थे।

उनके भाषण अंग्रेजी राज्य के शोषण, अत्याचारों और दमन के खिलाफ होते थे।

मार्च 1907 में लाहौर के आर्य सेवक होटल के मैदान में होने वाली सभा में अजीत सिंह ने न्यू कोलोनाईजेशन बिल की खिलाफत की। उसे वापस लेने की मांग करते हुए चेतावनी दी कि दो माह के अंदर ऐसा नहीं हुआ तो हम कोई टैक्स नहीं देंगे। इस देश की लूट खसोट को अब बर्दाशत नहीं किया जाएगा। हम में से हर एक सिर पर कफन बांधे खड़ा है। उस सभा की चर्चा करते हुए सभा में मौजूद 'इंडिया' पत्र के संपादक लाला पिंडी दास ने लिखा था कि सरदार जी सरकार के अत्याचारों की कहानी कुछ इस अंदाज में कहते थे कि लोग दहाड़े मार कर रोने लगते थे। जलसा वंदे मातरम् की गूंज के साथ खत्म हुआ था।

पगडी संभाल जट्टा आंदोलन

भारत माता सोसायटी की अगली सभा 22 मार्च को लायलपुर में हुई, इसमें आठ हजार श्रोता थे। इस सभा में लाला लाजपत राय आए थे। इस सभा में भारत माता सोसायटी के कार्यकर्त्ता बांके दयाल ने अपनी वह कविता पढ़ी थी जो बहुत प्रसिद्ध हुई।

पगड़ी संभाल ओ जट्टा
पगड़ी संभाल ओए

इस कविता की लोकप्रियता के कारण इस किसान आंदोलन का नाम ही पगड़ी संभाल ओ जट्टा पड़ गया था।

इन सभाओं की एक और खास बात थी। इनमें प्रायः सैनिक भी रहते थे। मुल्तान की 18 अप्रैल की सभा में 200 सैनिक मौजूद थे। अंग्रेजी सरकार के लिए यह बेहद संकटपूर्ण स्थिति थी। खास तौर पर पंजाब सरकार के लिए। 10 मई को 1857 की पचासवी वर्षगांठ आने वाले थी। ब्रिटिश गुप्तचर विभाग के पास खबर थी कि अजीत सिंह उसी विद्रोह की अगली श्रृंख्ला की तैयारी में थे। गुप्तचर विभाग ने 05 मई 1907 को अपनी एक विस्तृत रिपोर्ट में कहा था कि वह (अजीत सिंह) लोगों को अंग्रेज़ों का वध करने के लिए भड़का रहे हैं। वे लोगों को और सेना को बगावत के लिए उत्तेजित कर रहे हैं। राजद्रोही पर्चे बांटे जा रहे हैं। रिपोर्ट में कहा कि अजीत सिंह ही इस सबके नेता हैं।

पंजाब सरकार की घबराहट स्वाभाविक थी। पंजाब के गवर्नर इंट्सन ने वायसराय को लिखा कि पंजाब में गदर होने वाला है और उसका नेतृत्व अजीत सिंह और उनकी पार्टी करेगी। बगावत को रोकने का प्रबंध करें। 1818 के रेग्यूलेशन तीन के अंतर्गत 9 मई को लाला जी को और 3 जून को अजीत सिंह को मांडले (बर्मा) भेज दिया गया। जबर्दस्त विरोध के कारण अंग्रेज सरकार उन्हें छोड़ने के लिए विवश हुई। साथ में अजीत सिंह को छोड़ना भी सरकार की विवशता रही। कोलोनाईजेशन ऐक्ट सरकार ने वापस ले लिया। यह किसान आंदोलन की और खुद अजीत सिंह की भारी सफलता थी।

मांडले से वापस आकर अजीत सिंह फिर से भारत माता सोसायटी के लक्ष्यों के प्रति समर्पित भाव से काम करने लगे। विद्रोही साहित्य की रचना भी होती रही, उस समय 'पेशवा' दैनिक पत्र की 1500 प्रतियां छपती थीं। उन्होंने भाषा कोड की रचना भी की थी जिसकी मदद से देश विदेश के बीच गुप्त संदेशों का आदान प्रदान हो सके।

क्रांति की योजना

शहीद भगत सिंह के चाचा अजीत सिंह जी का पूरा जीवन आजादी के लिए क्रांति संगठित करने की जद्दोजहद में बीता, भारत माता सोसायटी से लेकर पगड़ी संभाल ओ जट्टा आंदोलन, फिर गदर आंदोलन और आखिर में सुभाष चंद्र बोस की आजाद हिंद फौज से उनका जुड़ाव रहा।

इसी समय अजीत सिंह ने लाला हरदयाल, किशन सिंह जी, सूफी अंबा प्रसाद और अपने अन्य साथियों के साथ मिलकर देश को आजाद कराने की योजना बनाई। यह योजना इस तरह थी: लाला हरदयाल अमरीका, सूफी अंबा प्रसाद अफगानिस्तान-ईरान और निरंजन सिंह ब्राजील जाएं और उन देशों में भारत के पक्ष में वातावरण बनाएं ताकि जरूरत पड़ने पर भारत को विदेशों से मदद मिल सके। अजीत सिंह देश में रह कर तमाम क्रांतिकारी संगठनों से संपर्क बना कर एक मजबूत, प्रभावशाली क्रांति दल का निर्माण करें और जब पहला विश्व युद्ध शुरू हो तब ब्रिटेन के युद्ध में व्यस्त होने के कारण उस परिस्थिति का लाभ उठाकर भारत में अंग्रेजी राज्य के खिलाफ विशाल स्तर पर क्रांति का आयोजन किया जाए।

अजीत सिंह और उनके साथियों की गतिविधियों और उनके खतरनाक इरादों की रिपोर्ट सरकार को मिल रही थी। सरकार उनके खिलाफ वारंट निकाल कर उन्हें बंदी बनाने और कठोर दंड देने की कोशिश कर रही थी। उनके बड़े भाई अपने सूत्रों द्वारा सरकार की खबर रखते थे। भाई के लिए संकट देखकर उन्होंने अजीत सिंह को विदेश चले जाने का परामर्श दिया। अजीत सिंह ने सूफी अंबा प्रसाद और कुछ अन्य

साथियों के साथ 1909 में अपने देश की धरती से विदा ली। इस तरह अजीत सिंह के जीवन का एक अध्याय समाप्त होता है। राजद्रोही साहित्य को आधार बनाकर किशन सिंह, लाला लालचंद फलक, जिया उल हक ('पेशवा' के संपादक), मुंशी राम और नंद गोपाल को सजा दी गई।

अजीत सिंह के जीवन का दूसरा अध्याय बहुत लंबा, संघर्ष पूर्ण और कष्टों से भरा रहा। यह सफर कराची के समुद्र तट से शुरू हुआ। ईरान, तुर्किस्तान, शीराज, टर्की, बर्लिन, उनकी यात्रा के पड़ाव रहे। इस दौरान वे लगातार अंतर्राष्ट्रीय राजनेतों के संपर्क में रहे और भारत में गंदर आंदोलन के आयोजन में अपने स्तर से लगे रहे। 1916 में उन्हें अनुमान हो गया था कि मित्र राष्ट्रों को अमरीका का साथ मिलते ही युद्ध का नतीजा जर्मनी के खिलाफ होगा। इस लिए वे 1916 में ब्राजील चले गए। 1932 में फ्रांस आए और फिर जर्मनी। जर्मनी में उन्होंने सुभाष चंद्र बोस से मिलकर देश के आगामी कार्यक्रमों पर चिंतन किया।

आजाद हिंद लश्कर

साल 1939 में दूसरा विश्व युद्ध शुरू हुआ। उस समय अजीत सिंह ने रोम रेडियो से भारत के लिए और यूरोप स्थित ब्रिटिश फौजों के भारतीय सिपाहियों (जिनकी संख्या बहुत थी) के लिए अनेक रेडियो प्रसारण किए। इस बीच सुभाष चंद्र बोस ने उनके संपर्कों का लाभ उठाया। 'आजाद हिंद लश्कर' का संगठन किया। इसका मुख्य उद्देश्य भारतीय फौजियों को लश्कर में भर्ती करना था। आगे चलकर उन्होंने अपने लश्कर के फौजियों को बोस की आजाद हिंद फौज के लिए भी भेजा। आठ अक्तूबर 1943 को युद्ध में इटली की हार हुई। हालात बदल चुके थे। आखिरकार दो मई 1945 को अंग्रेज़ों ने अजीत सिंह जी को बंदी बना लिया।

भारत में 1938 में जवाहर लाल नेहरू के नेतृत्व में अंतरिम सरकार बनते ही अजीत सिंह को देश वापस बुलाने का आंदोलन शुरू हो गया था। लेकिन कागजी कार्रवाई पूरी न होने के कारण यह संभव नहीं हो सका। 1946 में कृष्ण मेनन रूस गए। वहां उन्हें आजाद हिंद फौज के नेता गिरजा मुखर्जी से अजीत सिंह जी के यातनापूर्ण जीवन और उनकी जर्जर सेहत की खबर मिली। नेहरू ने वायसराय पर दवाब डाला। इन कोशिसों के बाद वे मार्च 1947 को बंदी जीवन से आजाद होकर लाहौर पहुंचे। पहली अप्रैल 1947 को उन्होंने देश के लिए अपना ओजपूर्ण और सारगर्भित संदेश प्रसारित किया। उन्होंने आपसी भाईचारे को आधार बना कर आजादी के इस स्वर्णिम अवसर से वर्तमान और भविष्य संवारने का आह्वान किया। उन्होंने कहा : **अपने मुल्क के शहीदों को कभी मत भूलो जिन्होंने वतन की शान की खातिर देश के अंदर और बाहर अपनी जान कुर्बान की। उनके नक्शे कदम पर चलो क्योंकि शहीदों की अमवाल (मौतें) कौमी हयात (जीवन) का वायस (कारण) हुआ करती हैं।**

इसके बाद स्वागत समारोहों का लंबा सिलसिला चला। पंजाब ने उन्हें सिर आंखों पर बिठाया। लेकिन देश बंट चुका था और इस बंटवारे ने उन्हें तोड़ दिया था। उनके जीने की इच्छा खत्म हो चुकी थी। इस तरह 15 अगस्त 1947 को मृत हो कर उनके जीवन के दूसरे अध्याय का अंत हो गया हमेशा के लिए।

◦ उषा निगम ने इतिहास में शोध किया है और वह स्वतंत्र लेखन करती है। 97927-33777

...पृष्ठ 14 का शेष राष्ट्र की ओर बढ़ने का एक कदम है।

अब ये ताकतें खुलेआम हिंदुत्ववादी मुहिम को जारी रखे हुए हैं। उन्होंने मुसलमानों को असली दुश्मन बता कर, उन्हें जनता की नजरों में हिंदू विरोधी और हिंदूओं के दुश्मन और खलनायक ठहराने की मुहिम चला रखी है। पूरी सरकार, मीडिया घराने और अधिकारी वर्ग, पैसे वाले और धन्ना सेठ उनकी मदद कर रहे हैं। गोदी मीडिया इनके काम को जोर-शोर से पूरा कर रहा है और समाज में हिंदुत्ववादी जहर घोल रहा है।

यह दबंगों, पैसे वालों, धन्ना सेठों और साम्राज्यवादी पूंजीपतियों का निजाम कायम करना चाहता है, उनका पिट्ठू और पिछलग्गू है, ताकि भारत में वर्ण व्यवस्था बनी रहे और वर्ण व्यवस्था के नाम पर शोषण, दमन, अन्याय, जुल्म, भेदभाव जारी रहे हिंदू राष्ट्र का विचार यही ही चाहता है।

वामपंथी पार्टियों को छोड़कर अधिकांश विपक्षी दल इन देशविरोधी तत्वों की हिंदूकरण की मुहिम को चुनौती नहीं दे रहा है। इनमें से अधिकांश या तो डर गई हैं या चोरी-छिपे इस मुहिम का समर्थन कर रही हैं। भारत में लोकतांत्रिक तानाशाही कायम हो गई है। जनता का अधिकांश हिस्सा इन हिंदूत्ववादियों की हिंदूकरण की मुहिम में बह गया है और ये ताकतें मनुवादी रास्ता अपनाकर भारत को हिंदू राष्ट्र बनाने के रास्ते पर चल रही हैं, जो इस देश के संविधान, कानून के शासन, जनतंत्र, गणतंत्र और किसानों मजदूरों के हितों के बिलकुल खिलाफ है ।

मस्तिष्क को भी अपडेट करना जरूरी है

शरद कोकास

मानव जीवन के प्रारम्भिक दौर में मनुष्य जन्म, मृत्यु और प्रकृति के रहस्यों से नावाकिफ़ था। वह अपनी ओर से जीने का भरसक प्रयास करता था लेकिन बीमारियाँ और प्राकृतिक विपदायें उसे घेर लेती थीं और वह असमय ही काल के गाल में समा जाता था। जिस तरह स्वयं का जन्म और मृत्यु उसके लिए रहस्य था उसी तरह वर्षा होने, बिजली कड़कने, हवा बहने से लेकर सूर्य निकलने और डूब जाने जैसे अनेक रहस्य उसके जीवन में शामिल थे? भविष्य में जिन्हें उसे स्वयं ही सुलझाना था ?

विभिन्न घटनाओं, परिघटनाओं और क्रिया कलापों में कार्य और कारण का सम्बन्ध ना स्थापित कर पाने के कारण उसने अनेक अज्ञात शक्तियों की कल्पना की और उन्हें इन घटनाओं से जोड़कर अपने विवेकानुसार उसने अपने जीवन को सुरक्षित रूप से संचालित करने के लिये अनेक मान्यतायें गढ़ लीं ।

प्राचीन मनुष्य आकाश में घटित होने वाली परिघटनाओं को एक बच्चे की तरह बहुत उत्सुकता से देखता था। वह देखता था कि सूर्य जब आकाश में होता है तो सब स्पष्ट दिखाई देता है वहीं रात में चांद रोज़ आकार बदलता है और एक निश्चित अवधि के बाद फिर पूरा दिखाई देता है । उसने हज़ारों वर्षों तक इस प्रक्रिया का अध्ययन किया। सूर्य तो उसे हमेशा एक जैसा ही दिखाई देता था किन्तु चाँद उसके लिए नए रूप लेकर आता। इस तरह चन्द्रमा और सितारों की बदलती स्थिति के अनुसार उसने काल गणना के नियम बनाए तथा दिन, पखवाड़े,महीने और वर्ष की व्याख्या की।

सभ्यताओं के विकास के क्रम में सिन्धु, बेबीलोनिअन, मिस्र, मेसोपोटामिया और चीनी सभ्यतायें, नदियों के किनारे विकसित हुईं। इन लोगों ने ब्रह्मांड, सूर्य,आकाश ,चांद, तारों के बारे में अपनी कल्पनायें की। प्रारंभिक मानव का न केवल बौद्धिक विकास पर्याप्त हुआ था बल्कि अपने जैविकीय रूप में उसका मस्तिष्क भी आज के मानव के मस्तिष्क जैसा नहीं था। अत: विश्लेषण करने की क्षमता भी उसके भीतर नहीं थी। फलस्वरूप अपने जीवन में जन्म, मृत्यु से लेकर भूख,बीमारी और शिकार प्राप्त करने की स्थितियों का कारण वह किन्ही अज्ञात शक्तियों को मानने लगा। उसकी मान्यता थी कि यह पशु पक्षी, पेड़ ,पर्वत या नदी उसके पूर्वज हैं और इन्हीं से उसके वंश की उत्पत्ति हुई है। यही उस प्रारंभिक मनुष्य का प्रजनन विज्ञान था ।

कालांतर में यही धर्म और रहस्यों की खोज का विषय प्रारंभिक विज्ञान का स्रोत बना। मनुष्य ने बीमारियों की चिकित्सा के लिए प्रकृति में उपलब्ध जड़ी बूटियों और वनस्पतियों की सहायता से चिकित्सा की विधियाँ खोजीं। इसी से रसायन विज्ञान का जन्म हुआ। कृषि के क्षेत्र में मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने से लेकर नए उपकरणों के निर्माण तक विज्ञान ही उनके काम आया। यद्यपि प्रारंभिक काल में आकाश में देखने हेतु उपकरण उपलब्ध नहीं थे किन्तु सामान्य आँख से देखकर सूर्य, चन्द्रमा, ग्रह, नक्षत्रों, ॠतुओं आदि का अध्ययन करते हुए मनुष्य ने खगोल विज्ञान को जन्म दिया ।

यह वही दौर था जब गणना हेतु नई पद्धतियों की खोज की गई और ज्यामिति का विकास हुआ। ताम्र,कांस्य और लोहे की खोज के साथ धातुविज्ञान का जन्म हुआ। खनिज विज्ञान के अंतर्गत अयस्कों की खोज हुई और इनसे धातु प्राप्त करने की विधियाँ विकसित की गईं। आभूषण तथा मुद्रा हेतु स्वर्ण और विविध रत्नों की खोज रत्न विज्ञान कहलाई। ऊनी और सूती वस्त्र बनाने और उन्हें प्राकृतिक रंगों अथवा रसायनों से रंगने की तकनीक खोजी गई । प्राचीन इमारतों के निर्माण हेतु स्थापत्य कला के साथ साथ वेधशालाओं का निर्माण हुआ। हड़प्पा संस्कृति की सुनियोजित नगर व्यवस्था भी इसी विज्ञान की देन थी ।

आज हम जब विज्ञान की बात करते हैं तो यह कहते हैं कि विज्ञान आधुनिक युग की देन है ? वस्तुत: हर युग का अपना एक विज्ञान होता है, तदनुसार प्राचीन काल में प्राप्त यह ज्ञान उस समय के विज्ञान की प्रारंभिक खोजों के अंतर्गत ही आता है ।कई विधियाँ अनुमान अथवा कल्पना पर ही आधारित रहीं। दस्तावेजीकरण जैसी कोई समझ न विकसित होने के कारण अनेक ग्रंथों में निर्माण की तकनीकी नियमावली अथवा

मैन्युअल प्राप्त नहीं हुए। इसलिए आधुनिक वैज्ञानिकों को नए सिरे से प्रयोग करने पड़े। संभव है इसका एक प्रमुख कारण वास्तव में उसका न होना हो जिसके अभाव में कल्पना को प्रमुखता प्रदान की गई हो ? इसीलिये तकनीकी ज्ञान की विधि प्राप्त न होने के कारण महाकाव्य में वर्णित पुष्पक विमान को पहला विमान नहीं माना गया बल्कि राईट ब्रदर्स को विमान के अविष्कार का श्रेय दिया गया। इस तरह ज्ञान के अभाव में हमने कल्पनाओं को ही सच मान लिया ?

वर्तमान तक आते आते विज्ञान की परिभाषा स्पष्ट होती गई। यह स्पष्ट रूप से कार्य कारण सम्बन्ध पर स्थापित हो गया अर्थात यह तय किया गया कि संसार में हर घटना के पीछे कोई न कोई कारण होता है। प्राचीन समय से लेकर अब तक मनुष्य इस प्रकृति के रहस्यों को सुलझाने में तत्कालीन विज्ञान की मदद लेता रहा है ? स्पष्ट रूप से मनुष्य का उद्देश्य पृथ्वी के निवासी इस मनुष्य को भ्रांतियों से बाहर निकालकर अधिक से अधिक सुख प्रदान करना था ।

सभी अविष्कार सुविधाओं के लिए हुए, लेकिन मनुष्य के बीच प्रतिद्वंद्विता भी बड़ी। इसलिए सुविधा हेतु किये जाने वाले अविष्कारों के साथ साथ विध्वंस के लिए भी विज्ञान का उपयोग हुआ। द्वितीय विश्वयुद्ध तक ऐसे बहुत सारे उपकरणों और आयुधों का आविष्कार हो चुका था जो मानव जाति के लिए विनाशक थे। आज युद्ध की स्थिति में हम कल्पना भी नहीं कर सकते कि मानव जाति के पास कैसे विध्वंसक हथियार हो सकते हैं, हम अभी तक उन्नीस सौ पैंतालीस में नागासाकी हिरोशिमा पर गिराए गए परमाणु बम को ही सबसे ताकतवर और घातक अस्त्र मानते आ रहे हैं ?

विगत तीन चार सदियाँ विज्ञान के अब तक के सबसे अधिक अविष्कारों की सदियाँ रही है। इन्ही सदियों में बिजली की खोज की गई, विज्ञान के विभिन्न नियम स्थापित किये गए और उन नियमों के आधार पर प्रकृति में घटित होने वाली बहुत सारी बातों की व्याख्या की गई। अभी चार सौ साल पहले तक यही माना जाता था कि पृथ्वी अपने स्थान पर स्थिर है और सूर्य उसकी परिक्रमा करता है किन्तु गैलेलियो द्वारा दूरबीन की खोज ने इसे ग़लत सिद्ध कर दिया गया। विज्ञान की इन नई खोजों ने दुनिया को ही बदल दिया यद्यपि उसके लिए इन महान वैज्ञानिकों को धर्म के मठाधीशों द्वारा सजाएँ दी गईं और उन्हें अपनी जान भी गंवानी पड़ी । उसके बाद भी भौतिकशास्त्र और रसायन शास्त्र के अलावा विज्ञान विविध क्षेत्रों में अपनी घुसपैठ करता रहा ।

अगर आप ध्यान दें तो पिछली एक सदी में हमने इतने आविष्कार देखे हैं जितने पहले कभी नहीं देखे थे । हमने कभी कल्पना नहीं की थी कि मोबाइल जैसा एक छोटा सा यंत्र हमारी जेब में होगा जिसके माध्यम से हम सारी दुनिया को देख सकेंगे और संपर्क कर सकेंगे। आगे आने वाली दुनिया का चित्र विज्ञान के इसी विकास पर निर्भर करता है। अगली सभी सदियाँ विज्ञान की हैं। भविष्य में जहाँ मनुष्य की सुविधा के लिए नए आविष्कार किये जायेंगे वहीं मनुष्य के संहार के लिए भी नए अस्त्रों का निर्माण होगा।

हालाँकि खतरे और भी हैं। इस सदी में पुनरुत्थान वादियों द्वारा यह कोशिश भी की जाती रहेगी कि विज्ञान मनुष्य के लिए लाभकारी नहीं है। विज्ञान शब्द का अर्थ ठीक से न समझ पाने के कारण उनके द्वारा प्राचीन ग्रंथों में स्थापित विज्ञान को ही सर्वश्रेष्ठ कहा जायेगा, इस तरह वे विज्ञान को पीछे ले जाने की कोशिश भी करेंगे। समाज में विज्ञान के साथ छद्मविज्ञान का भी समावेश होगा। सत्ता द्वारा इसी छद्मविज्ञान को पाठ्यक्रमों में भी शामिल किया जाएगा ?

अध्यात्म और विज्ञान की लड़ाई हर युग में होती आई है सो आगे भी जारी रहेगी। यह जानना आवश्यक है कि विज्ञान कार्य कारण पर आधारित, सतत चलने वाली प्रक्रिया है अत: जैसे जैसे सभ्यता का विकास होता जायेगा विज्ञान की नई नई उपलब्धियां होती रहेंगी। विज्ञान हर बार अपनी पिछली उपलब्धि को ख़ारिज कर आगे बड़ता जायेगा। हम हर दो तीन साल में आने वाली कंप्यूटर, मोबाइल, टीवी, और ऐसे ही सुविधा प्रदान करने वाली प्रत्येक वस्तु की नई जनरेशन या नए वर्शन में विज्ञान के इस विकास को देख सकते हैं। हमें नई समझ के साथ अपने मस्तिष्क को भी अपडेट करना होगा ?

sharadkokas.60@gmail.com
8871665060

नव-राष्ट्रवाद और लोगों के सपने

स्वराजबीर

देश में इस तरह का माहौल और वृतांत बनाया गया है जिससे यह प्रतीत होता है जैसे हिंदू धर्म बहुत तेजी से एक नई विजय-यात्रा की राह पर आगे बढ़ रहा हो। इस वृत्तांत में रोज नए उप-वृतांत जन्म लेते हैं। सबसे नया उप-वृत्तांत ज्ञानवापी मस्जिद के बारे है जिसमें एक निचली अदालत द्वारा करवाए गए सर्वेक्षण के दौरान शिवलिंग मिलने का दावा किया गया है और मस्जिद को ढहाने व मंदिर बनाने की मांग उभरने लगी है। कहीं यह वृत्तांत उभरता है कि ईसाई पादरी हिंदू समुदाय के लोगों को लोभ लालच देकर उनका धर्म परिवर्तन करवा रहे हैं। कहीं से यह खबर आती है कि देश के सबसे बड़े अल्पसंख्यक समुदाय के नौजवान बहुसंख्यक समुदाय की लड़कियों को बहला कर उनके साथ विवाह करवाते हैं और अपने धर्म के लोगों की गिनती बढ़ाते हैं; जिसे लव-जेहाद का नाम दिया गया है । इनके विरुद्ध कानून बनाए गए और बनाए जा रहे हैं । (उदाहरण के तौर पर इन दिनों कर्नाटक में जारी किया गया अध्यादेश)। मुसलमान लड़कियों के हिजाब पहनने को देश की धर्मनिरपेक्षता के विरुद्ध बताया जाता है। गौ-रक्षा के नाम पर भीड़-हिंसा धार्मिक कर्तव्य बन चुकी है; भीड़-हिंसा करने वाले सामाजिक स्तर पर सम्मानित हो रहे हैं। धर्म संसदों में बहुसंख्यक वर्ग के नौजवानों को अल्पसंख्यक वर्ग के लोगों को जान से मारने, खत्म करने हेतु हथियार उठाने के लिए उकसाया जाता है; नफरत भरे भाषण दिए जाते हैं। महात्मा गांधी के हत्यारे नाथू राम गोडसे का गुणगान किया जाता है। गिरजाघरों पर हमले लगातार बढ़ रहे हैं। एक राज्य का विधायक मुसलमान समुदाय के व्यापारियों का बायकाट करने का आह्वान करता है। धार्मिक त्यौहारों के समय भड़काऊ नारे लगते हैं और हिंसा होती है; फिर बुलडोजर चलाए जाते हैं।

कई राज्यों में देश के इतिहास की पढ़ाई के पाठ्यक्रम बदल दिए गए हैं; सिंधु घाटी की सभ्यता अब सिंधु-सरस्वती सभ्यता बन गई है। वह संगठन, जिसने आजादी के संघर्ष में कोई भाग नहीं लिया, को ऐसी शक्ति बताया जा रहा है जो देश की एकता कायम रखना चाहती थी और कांग्रेस को देश के बंटवारे के लिए जिम्मेदार ठहराया जा रहा है। बार-बार दोहराया जाता है कि देश विश्व गुरु बनने जा रहा है। पुरातन भारत को सर्वश्रेष्ठ देश और पुरातन धार्मिक ग्रंथों को सारे ज्ञान का भंडार बताया जाता है। यह वृत्तांत भी लगभग स्थापित हो चुका है कि देश में जो भी गलत घटनाएं हुई हैं वह बाहर वालों (अर्थात् मुसलमान हमलावरों) के कारण हुई और मौजूदा सरकार उन्हें ठीक कर रही है । इन सारे उप-वृत्तांतो के साथ-साथ ये खबरें भी आती हैं कि देश एक हिंदू राष्ट्र है। एक राज्य का विधायक हिंदू राष्ट बनाने का प्रयास करने के लिए सौगंध लेता है। यह सवाल कि धर्म आधारित राष्ट्र के बारे में बात करना संविधान, जिसके अनुसार भारत धर्मनिरपेक्ष देश है, के विरुद्ध है, को नव-राष्ट्रवादी शोरगुल में दबा दिया जाता है। यह उप-वृत्तांत दूसरे उप-वृत्तांतों में घूमता और उनका हिस्सा होने के साथ-साथ वह मुख्य विचारधारात्मक धारणा है, जो दूसरे उप-वृतांतों की आधार भूमि बनती है ।

लोगों के मन में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि क्या केंद्र में सत्ताधारी पार्टी देश को धर्म आधारित राष्ट्र घोषित करेगी? देश के संवैधानिक विशेषज्ञ बताते हैं कि इस तरह करना संभव नहीं है; ना सिर्फ संविधान के अनुसार भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है बल्कि सुप्रीम कोर्ट के कई निर्णय यह दोहरा चुके हैं कि धर्मनिरपेक्षता संविधान के बुनियादी ढांचे का हिस्सा है (1994 के एस.आर. बोम्मई केस में सुप्रीम कोर्ट का फैसला) और केशवानंद भारती केस (1973) में सर्वोच्च अदालत के फैसले अनुसार बुनियादी ढांचे में संवैधानिक संशोधन नहीं किया जा सकता। दूसरी तरफ कुछ राजनीतिक विशेषज्ञ और चिंतकों का कहना है कि राष्ट्रों के किरदार का निर्णय संविधान या कानूनों द्वारा नहीं बल्कि लोगों के दिलों में होता है। ऊपर बताए गए उप-वृत्तांत बहुसंख्यक समुदाय के लोगों के दिलों में यह धारणा बना रहे हैं कि भारत एक हिंदू राष्ट्र है; यह एक अत्यंत भावनात्मक मुद्दा है और बहुसंख्यक समुदाय के लोगों का बड़ा हिस्सा इसे स्वीकार करता है; यदि कोई इसके विरुद्ध दलील दे तो उससे यह प्रश्न पूछा जाता है कि यदि भारत हिंदू राष्ट्र नहीं बनेगा तो और कौन-सा देश बनेगा। विशेषज्ञ यह दलील देते हैं कि जब सत्ताधारी पार्टी और उसका पक्ष लेने वाले कट्टरपंथी संगठन इस निर्णय पर पहुंचेंगे कि बहुसंख्यक समुदाय का लोक-मन इस धारणा को स्वीकार कर चुका है तो

इसका ऐलान भी कर दिया जाएगा ।

क्या घोषणा करने से किसी देश को धर्म आधारित राष्ट्र बनाया जा सकता है ? राजनीतिक विशेषज्ञों का कहना है कि यदि बहुसंख्यक वर्ग के लोगों का बड़ा हिस्सा इस धारणा को स्वीकार कर ले तो ऐसा करने के लिए ढंग-तरीके ढूंढे जा सकते हैं। ऐसे बयान अब भी दिए जा रहे हैं पर कानूनी तौर पर देश को धर्म-आधारित राष्ट्र घोषित करने के लिए संविधान-संशोधन की जरूरत पड़ेगी जो किया जा सकता है; जैसे संविधान की धारा 370 रद्द कर दी गई है। यह दलील दी जा रही है कि यदि 1976 में 42वें संविधान-संशोधन द्वारा संविधान की प्रस्तावना में धर्मनिरपेक्ष और समाजवादी शब्द डाले जा सकते हैं तो ऐसा संशोधन करके निकाले भी जा सकते हैं; इन शब्दों के निकालने को यह कहकर न्याय-संगत ठहराया जा रहा है कि ये शब्द संविधान की प्रस्तावना में उस समय डाले गए जब देश में इमरजेंसी लगी हुई थी और लोकतंत्र खतरे में था; इन शब्दों की अब कोई जरूरत नहीं है। एक बार ऐसी पहलकदमी सफल हो जाती है तो संविधान की प्रस्तावना या किसी और हिस्से में देश को धर्म-आधारित राष्ट्र घोषित करने बारे शब्द सीधे तौर पर डाले जा सकते हैं या ऐसी अप्रत्यक्ष और घुमावदार शब्दावली प्रयोग की जा सकती है जिसमें यह निहित हो कि देश बुनियादी तौर पर सबसे बड़े धर्म की सर्वश्रेष्ठता को स्वीकार करता है। यह प्रश्न पूछा जाना स्वाभाविक है कि क्या कुछ राजनीतिक पार्टियां ऐसे संशोधन का विरोध नहीं करेंगी। इसका उत्तर यह कि शायद ही कोई बड़ी राजनीतिक पार्टी ऐसे संशोधन का विरोध करे; बहुत-सी क्षेत्रीय पार्टियां ऐसे संशोधन के पक्ष में ही झुकेंगी; कुछ पार्टियां इस मुद्दे पर टूट भी सकती हैं। वामपंथी पार्टियां ऐसे संशोधन का विरोध जरूर करेंगी पर उनकी राजनीतिक ताकत बहुत सीमित है। दलील दी जाती है कि सुप्रीम कोर्ट ऐसे संविधान-संशोधन को मान्यता नहीं देगी। राजनीतिक विशेषज्ञों के अनुसार जो राजनीतिक पार्टी धर्म-आधारित राष्ट्र की धारणा को बहुसंख्यक वर्ग के लोगों के मनों में पैदा और मजबूत करने में कामयाब हो रही है, वह ऐसे संशोधन को सुप्रीम कोर्ट से स्वीकार करवाने के ढंग-तरीके भी तलाश लेगी। वह पहले भी अपनी कार्यवाहियों पर सुप्रीम कोर्ट की मोहर लगवाने में कामयाब हुई है। ऐसा एक फैसला देने वाले पूर्व मुख्य-न्यायाधीश को राज्यसभा की सीट देकर सम्मानित किया जा चुका है। इसमें कोई शक नहीं है कि सुप्रीम कोर्ट ने बहुत बार संविधान और उसके बुनियादी ढांचे को कायम रखने के लिए तत्कालीन सरकारों के विरुद्ध स्टैंड लिया और संविधानकी रक्षा की है पर ऐसी स्थिति की कल्पना करना मुश्किल नहीं जब कार्यपालिका (सरकार) इस बात पर अड़ जाए कि उसने विधानपालिका से संविधान-संशोधन करवा लिया है और उसे गलत नहीं ठहराया जा सकता।

यह यहां नहीं हो सकता

क्या इस तरह का कुछ इस देश में हो सकता है? कुछ लोगों का कहना है कि यह यहां नहीं हो सकता। कुछ राजनीतिक विशेषज्ञों के अनुसार यह धारणा खोखले विश्वास पर आधारित है । हकीकत यह है कि बहुसंख्यक वर्ग के लोगों के मनों में तो यह घर कर ही रहा है; जगह-जगह पर योजनाबद्ध तरीके से धर्म-आधारित राष्ट्र के लिए आवाज उठाई जा रही है। जिन कट्टरपंथी ताकतों को लोकतांत्रिक शक्तियां हाशियागत ताकतें बताया करती थीं, उनकी विचारधारा अब मुख्यधारा की विचारधारा बन गई है बन रही है । जब एक धारणा बहुसंख्यक वर्ग के लोगों के बड़े हिस्से द्वारा स्वीकार कर ली जाए तो उसे अमलीजामा पहनाना ज्यादा कठिन नहीं होता ।

प्रमुख सवाल यह है कि क्या इस रुझान का सामना नहीं किया जा सकता । इसका जवाब यह है कि इस रुझान का सामना करना ही लोकतांत्रिक शक्तियों का प्रमुख कार्य है; यह रुझान नफरत फैलाने और बंटवारे की धारणाओं पर आधारित है; इसलिए लड़ाई बुनियादी तौर पर विचारधारा की है। लोकतांत्रिक शक्तियों के सामने प्रमुख राजनीतिक-ऐतिहासिक कार्य यह है कि उन लोगों, जिनके मनों में नफरत के बीज बोए जा रहे हैं, को नफरत और धार्मिक कट्टरता की दलदल से बाहर निकाला जाए। इसलिए महान सुधारकों व चिंतकों द्वारा प्रचारित बंधुत्व के संदेश को लोगों के सामने लाए जाने और उसे मुख्यधारा की विचारधारा का प्रमुख हिस्सा बनाने की जरूरत है। ब्राह्मणवादी सोच ने इन सुधारकों और इनकी सोच को जातिवादी बंधनों में कैद करने में सफलता प्राप्त की है। लोकतांत्रिक शक्तियों का कार्य ऐसे बंधनों को तोड़कर इन सुधारकों और चिंतकों की सोच को पुनर्जीवित करना है। जन-आंदोलनों के साथ-साथ ऐसी विचारधारा की लड़ाई ही देश को धार्मिक कट्टरता की दलदल में धंसने से बचा सकती है। कट्टरपंथी ताकतों ने बहुसंख्यक वर्ग के लोगों की सोच व सपनों को अगवा करके उन्हें धार्मिक झूठ के भंवर में डुबो दिया है। इस झूठ से मुक्ति के लिए उन्हें बड़ा संघर्ष करना पड़ेगा। 1935 में अमेरिकी उपन्यासकार **... शेष पृष्ठ 23 पर**

ईश्वर की अवधारणा

– पेरियार ई. वी. रामासामी

इस बात का कोई प्रणाम नहीं है कि सबसे पहले ईश्वर की अवधारणा के बारे में किसने बोला? लेकिन, यह अनुमान लगाया जा सकता है कि हमारे (तामिल द्रविड़ियन के) ऊपर ईश्वर का विचार आर्यों ने थोपा है। आर्यों से पहले तमिलों का कोई ईश्वर नहीं था। इस बात का प्रमाण यह है कि तमिल भाषा में ईश्वर के लिए कोई शब्द ही नहीं है। तमिल विद्वानों का कहना है कि 'कान्तजी' नामक एक शब्द तमिल भाषा में है, जिसका अर्थ ईश्वर है। बहरहाल, अभी तक इस शब्द को अर्थहीन माना जाता रहा है और उसे यह नया अर्थ मिले अधिक समय नहीं हुआ। इस शब्द की व्याख्या एक सर्वोच्च सत्ता के रूप में की जाती है, जो किसी के सहारे नहीं है और जो अमूर्त दर्शन से सम्बन्धित है। दर्शन शब्द के कई अर्थ हैं। उदाहरण के लिए सत्य, प्रकृति, वीरता, बुद्धिमत्ता आदि। अगर कहा जाता है कि कुछ है, जो सबसे परे है, तो फिर हमारे पास उसके लिए 'आस्तित्वहीन' और 'झूठा' शब्द ही रह जाएँगे। ऐसे में कहा जा सकता है कि कोई तमिल व्यक्ति जब 'कान्तजी' बोलता है, तब भी उसमें ईश्वर के नकार का अर्थ शामिल होता है। 'तत्त्वम कडंधू' यानी दर्शन से इतर शब्द के बात करें, तो मेरे विचार में तत्त्वम तमिल शब्द नहीं है। जैसा कि हमने देखा 'कान्तजी' शब्द का अपना कोई अर्थ नहीं है।

उत्तरी भाषाओं की बात करें, तो वहाँ भी 'कान्तजी' शब्द का कोई अर्थ नहीं है और इसके बाद ऐसे शब्दों का एक सिलसिला है, जो तमिल नहीं हैं। उदाहरण के लिए पंच भूतंगल जैसे शब्द शब्दकोश में प्रकाशित हैं। मेरा यह भी मानना है कि देवियम, भगवान, ईश्वरन, परपरन जैसे शब्द तमिल भाषा के नहीं हैं। ऐसे में यह तय है कि 'कडवुल' (ईश्वर) शब्द भी तमिल भाषा का नहीं है। शब्दकोष 'कडवुल' शब्द के लिए भी गुरु, अय्यर, वनवर और पुथेल जैसे अर्थ होता है।

अगर पुथेल (स्वर्गीय) शब्द को तमिल मान लिया जाए, तो उसके लिए भी देवियम (देवी), पुडुमई (नया), पुथियावार (नई इकाई), पुथल जैसे अर्थ उपलब्ध हैं।

ऐसे में अगर आप बिना संस्कृत अर्थों का सहारा लिए ईश्वर शब्द का अर्थ तलाश करना चाहते हैं, वह भी दैवीय अर्थ देते हुए, तो यह निश्चित है कि आप ऐसा उत्तर भारत की भाषाओं या तमिल में नहीं कर सकेंगे। क्योंकि ये भाषाएँ इस शब्द का वह अर्थ देती हैं, जो लोक में प्रचलित हैं। मेरे कहने का यह अर्थ नहीं है कि केवल तमिलों में ईश्वर की अवधारणा नहीं है। यहाँ तक कि आर्यों में भी ईश्वर की अवधारणा नहीं है।

आर्यों के लिए मूल आधार वेद हैं। इनमें किसी ईश्वर की बात नहीं है। वेदों में हमें देवताओं का ही उल्लेख मिलता है। ये सभी देवता इन्द्र के अधीनस्थ हैं। इस तरह देखा जाए, तो तमिल या आर्यों के लिए कोई ईश्वर नहीं था।

सभी ईश्वर देवताओं से चुने गए थे। कई देवता बहुत निम्न गुण वाले थे और उनमें मानवीय कमजोरियाँ थीं। तमिल तीन देवों को मानते हैं–ब्रह्मा, विष्णु और शिव। इन तीनों देवों को अन्य सभी देवों का जनक माना जाता है। चूँकि इनको अलग-अलग माना जाता है, इसलिए इनके नाम पर अलग धर्म और शास्त्र हैं। विभिन्न पुराणों में इन्हें एक-दूसरे से उच्च या निम्न दर्जा दिया गया है।

चूँकि, इन तीनों धार्मिक उपपंथों ने तीन तरह के देवों, पुरुष-स्त्री, मानव स्वभाव, मानवीय गुणों, मूल मनुष्यगत भावना रची व उनकी उपासना की, इसलिए, इन तीनों पथों के अनुयायियों को दुनिया के शेष लोग उचित ही बर्बर कहकर पुकार सकते हैं। दुनियाभर के ईश्वर में आस्था रखने वाले लोग उन देवताओं की उपासना कर रहे हैं, जो मानवीय गुणों से भरे हुए हैं। वे ऐसे देवताओं की पूजा नहीं करते, जिनमें 'ईश्वरीय गुण' हों। इतना ही नहीं, जो लोग ईश्वर में विश्वास करते हैं और उसकी उपासना करते हैं, उनके विचारों में भी किसी तरह की एकरूपता देखने को नहीं मिलती है। इतना ही नहीं ईश्वर

प्रदत्त, उसके बारे में या उसे लेकर कही जाने वाली बातों में भी किसी तरह की एकरूपता नहीं नजर आती है।

इसी तरह ईश्वर के गुणों की बात करें, तो उनकी केवल कल्पना ही की गई है। इनके बारे में भी लोग एक-दूसरे से जो चर्चा करते हैं, उसमें कोई एकरूपता नहीं दिखती। कहने का मतलब कोई एक ईश्वर नहीं है और कई तरह के ईश्वरों की कामना की जा सकती है।

आज की दुनिया में ईश्वर पर भरोसा करने वाले लोगों की संख्या में कमी आ रही है। इसकी वजह यह है कि लोगों में बौद्धिकता बढ़ रही है, वे शोध कर रहे हैं और तर्कशक्ति का प्रयोग कर रहे हैं। उनमें स्वतंत्र सोच का साहस है। इसका तात्पर्य यह है कि बेईमान और स्वार्थी व्यक्ति के लिए ईश्वर पर भरोसा आवश्यकता बन चुका है। केवल बुद्धिहीनों में पूजा-अर्चना की इच्छा बढ़ रही है। आज के विश्व में बहुत बड़ी संख्या में लोग ईश्वर में आस्था गँवा रहे हैं। रूस, चीन, जापान, बर्मा, स्याम और श्रीलंका जैसे देशों में 100 से लेकर 90 और 75 प्रतिशत तक लोग नासित्क हैं। अमेरिका, फ्रांस, इंगलैंड और जर्मनी जैसे पश्चिमी देशों में भी न केवल नास्तिकों के संगठन हैं, बल्कि करोड़ों लोग इनके सदस्य हैं, जो नास्तिकता को बढ़ावा देने के लिए लाखों पुस्तकें प्रकाशित करते हैं।

इसकी वजह यह है कि विद्वानों के बीच यह जागरूकता बढ़ती जा रही है कि ईश्वर में विश्वास एक बड़ी बाधा है और यह वैज्ञानिक सोच और सामाजिक स्तर पर मानवता के विकास को बाधित करती है। आज से 2000 साल पहले भी यह धारणा प्रचलित थी कि एक ज्ञानी या बुद्धिमान व्यक्ति के लिए कोई ईश्वर नहीं होता। उस वक्त भी ईश्वर में भरोसा करने वाले तथा अन्धविश्वासी लोग एक ज्ञानी के समान बुद्धिमत्तापूर्ण सोच नहीं अपनाते थे। दीपक तभी जल सकता है, जब उसमें तेल हो। इसी प्रकार सच तभी हासिल हो सकता है, जब तार्किक सोच मौजूद हो। अगर किसी व्यक्ति में यह भावना कूट-कूटकर भरी हो कि ईश्वर को विचारों से नहीं जाना जा सकता है, क्योंकि वह मस्तिष्क और सोच-विचार से परे है, तो फिर उससे समझदारी की उम्मीद करना बेमानी है। मौजूदा समय में दुनिया तेजी से वैज्ञानिक विकास की ओर अग्रसर है।

अगर हम पर शासन करने वाली मौजूदा सरकार इस तार्किक विचार पर आधारित हो कि कोई ईश्वर नहीं है, तो क्या हमारी यह सरकार भी रूस (उन दिनों का रूस-संदापक) की सरकार के समकक्ष नहीं हो जाएगी? जिस तरह भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी और दुनिया की तमाम कम्यूनिस्ट पार्टियां एक संस्थागत तरीके से काम कर रही हैं। क्या उससे यह संकेत नहीं मिलता है कि ईश्वर के अस्तित्व के प्रति नकार का भाव, बुद्धिमत्ता का विकास और सोचने की शक्ति बढ़ रही है? इसके अलावा यूरोप और एशिया के पूँजीवादी देशों के तमाम बड़े शहरों में भी कई ऐसे संघ हैं, जिनके करोड़ों सदस्य ईश्वर के अस्तित्व से इनकार करते हैं। ऐसे संगठनों की संख्या तेजी से बढ़ रही है। इसका क्या अर्थ है? पादरी, मुल्ला और पुजारी, जब उनका ईश्वर का विचार नष्ट हो रहा है और उसका खत्म हो जाना तय है, तो वे ऐसे ईश्वर की स्थापना का प्रयास करते हैं, जिसका अस्तित्व ही नहीं है। ऐसे में तार्किक या उचित विचार-विमर्श की गुंजाइश ही कहाँ रह जाती है?

मैं अपनी बात इस तथ्य के साथ समाप्त करूँगा कि पश्चिमी शोधकर्ताओं के मुताबिक, दुनिया की कुल 300 करोड़ की आबादी में से 150 करोड़ से भी कम आस्तिक हैं। शेष में से तीन-चौथाई पूरी तरह नास्तिक हैं, जबकि शेष भ्रम की अवस्था में हैं। यह बात पश्चिम में प्रमाणित है।

(विदुथलई-सम्पादकीय, 5 अगस्त, 1972) (अंग्रेजी से अनुवादः पूजा सिंह) (स्रोतःपुस्तक 'धर्म और विश्वदृष्टि')

.. पृष्ठ 21 का शेष सिंक्लेयर लेविस ने अपने मशहूर उपन्यास ''यह यहां नहीं हो सकता (It can't happen here)'' में यह कल्पना की थी कि अमेरिका में एडोल्फ हिटलर जैसा शासक सत्ता प्राप्त कर लेगा । उस कल्पना में बरजीलिअस ''बज'' राष्ट्रपति ऐसे वायदों, कि वह देश को महान बनाएगा, खुशहाली बढ़ाएगा और हर नागरिक को 5000 डालर (आजकल के 50,000 से 100000 डालर के बराबर) की वार्षिक आमदनी यकीनी बनाएगा, के आधार पर सत्ता हासिल करता है और फासीवादी तानाशाह बन जाता है । अमेरिका में फासीवाद तो नहीं आया पर ऐसे राष्ट्रपति जरूर बने जिन्होंने दुनिया के अलग-अलग देशों में युद्ध करवाए और तबाही मचाई । इस तरह सिनक्लेयर लेविस की मूल धारणा कि अमेरिका में फासीवाद आएगा तो सही स्थापित नहीं हुई पर अलग-अलग समयों में ऐसे व्यक्ति राष्ट्रपति बने जिनकी विचारधारा नीम-फासीवादी थी । इस प्रकार जो घटना चित्रित की जाए, भले ही वह हुबहू घटित न हो, लेकिन इस तरह की घटनाएं होती ही हैं।

अनुवादः कृष्ण कायत - (9896105643) मंडी डबवाली

तुम्हारे समाज की क्षय

- राहुल सांकृत्यायन

मनुष्य सामाजिक पशु है। मनुष्य और पशु में अन्तर यही है कि मनुष्य अपने हित और अहित के लिए अपने समाज पर अधिकतर निर्भर रहता है। वस्तुतः पशु-जगत् के बड़े-बड़े बलिष्ठ शत्रुओं के रहते तथा समय-समय पर आने वाले हिमयुग-जैसे महान् प्राकृतिक उपद्रवों से बचने में उसके दिमाग ने जो सहायता दी है, उसमें मनुष्य का समाज के रूप में संगठन बहुत भारी सहायक हुआ है। समाज ने पहले कमजोर मनुष्य की शक्तियों को सैकड़ों व्यक्तियों की एकता द्वारा बहुत बढ़ा दिया और तभी वह अपने प्राकृतिक और दूसरे शत्रुओं से त्राण पा सका, लेकिन आज उस समाज ने प्राकृतिक और पशु-जगत् के दूसरे शत्रुओं से रक्षा पाने में मदद देते हुए भी अपने भीतर से ऐसे शत्रुओं को पैदा कर दिया है जिन्होंने कि उन प्राकृतिक और पाशविक शत्रुओं से भी अधिक मनुष्य-जीवन को नारकीय बनाने का काम किया है।

समाज का अपने भीतर के व्यक्तियों के प्रति न्याय करना प्रथम कर्त्तव्य है। न्याय का मतलब यह होना चाहिए कि हर एक व्यक्ति अपने श्रम के फल का उपयोग कर सके। लेकिन आज हम उल्टा देखते हैं।

धन वह है जो आदमी के जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यक है। खाना, कपड़ा, मकान, ये ही चीजें हैं जिन्हें कि वास्तविक धन कहना चाहिए। वास्तविक धन के उत्पादक वे ही हैं जो इन चीजों को पैदा करते हैं। किसान वास्तविक धन का उत्पादक है, क्योंकि वह मिट्टी को गेहूँ, चावल, कपास के रूप में परिणत करता है। दो घंटे रात रहते खेतों में पहुँचता है। जेठ की तपती दुपहरी हो या माघ-पूस के सवेरे की हड्डी छेदने वाले सर्दी, वह हल जोतता है, ढेले फोड़ता है, उसका बदन पसीने से तर-बतर हो जाता है, उसके एक-एक हाथ में सात-सात घट्टे पड़ जाते हैं, फावड़ा चलाते-चलाते उसकी साँस टँग जाती है, लेकिन तब भी वह उसी तरह मशक्कत किये जाता है। क्योंकि उसको मालूम है कि धरती के यहाँ रिश्वत नहीं चल सकती-वह स्तुति-प्रार्थना के द्वारा अपने हृदय को खोल नहीं सकती। यह अंकिचन मिट्टी सोने के गेहूँ, रूपे के चावल और अंगूरी मोतियों के रूप में तब परिणत होती है जब धरती देख लेती है कि किसान ने उनके लिए अपने खून के कितने घड़े पसीने दिये, कितनी बार थकावट के मारे उसका बदन चूर-चूर हो गया और कुदाल अनायास उसके हाथ से गिर गई।

गेहूँ बना-बनाया तैयार एक-एक जगह दस-बीस मन रक्खा नहीं मिलता, वह पन्द्रह-पन्द्रह, बीस-बीस दानों के रूप में और वह भी अलग-अलग बालियों में छिपा सारे खेत में बिखरा रहता है। किसान उन्हें जमा करता है, बालियों से अलग करता है। दस-दस, बीस-बीस मन की राशि को एक जगह देखकर एक बार उसका हृदय पुलकित हो उठता है। महीनों की भूख से अधमरे उसके बच्चे चाह-भरी निगाह से उस राशि को देखते हैं। वे समझते हैं कि दुख की अंधेरी रात कटने वाली है और सुख का सवेरा सामने आ रहा है। उनको क्या मालूम कि उनकी यह राशि-जिसे उनके माता-पिता ने इतने कष्ट के साथ पैदा किया-उनके खाने के लिए नहीं है। इसके खाने के अधिकारी सबसे पहले वे स्त्री-पुरुष हैं जिनके हाथों में एक ही घट्टा नहीं है, जिनके हाथ गुलाब जैसे लाल और मक्खन जैसे कोमल हैं, जिनकी जेठ की दुपहरियाँ खस की टट्टियों, बिजली के पंखों या शिमला और नैनीताल में बीतती है। जाड़ा जिनके लिए सर्दी ही तकलीफ नहीं लाता, बल्कि मुलायम ऊन और कीमती पोस्तीन से सारे बदन को ढँके इन लोगों के लिए आनन्द के सभी रास्ते खोल देता है। निठल्ले और निकम्मे ये बड़े आदमी-जमींदार, महाजन, मिल-मालिक, बड़ी-बड़ी तनखाहों वाले नौकर, पुरोहित और दूसरी सभी प्रकार की जोकें-किसान के कसाले की इस कमाई के भोजन का सबसे पहले हक रखती हैं।

मजदूर भोंपू लगते ही आँख मलते हुए कारखाने की ओर दौड़ता है। अभी कुछ दिनों पहले तक तो काम के घंटों का भी

कोई निर्बन्ध न था और अब भी अधिक मजदूरों वाले कारखानों पर ही वह नियम लागू है। वहाँ तीन आने और चार आने रोज पर वह खटता है। इसी तीन-चार आने में उसे बीवी, तीन-चार बच्चों और बूढे माँ-बाप की भी फिक्र करनी है। एक दिन भी निश्चित हो पेट पर खाना उसके लिए हराम है और उस पर से यदि वह बीमार पड़ गया तो नौकरी से जवाब। यदि बूढ़ा या अंग भंग हो गया तो आसमान के नीचे उसको और उसके बाल-बच्चों को भीख देने वाला भी कोई नहीं। यही नहीं कल तक कारखाना चौबीसों घंटे चल रहा था, आज मालिक के पास खबर आती है-चीजों का दम गिर गया, अब उन्हें लागत दाम पर भी बाजार में कोई खरीदने वाला नहीं है। कारखाने में ताला लगा दिया जाता है। मजदूर, उसके बाल-बच्चे दाने-दाने के लिए बिलखने लगते हैं। जब उसे काम मिला था और मजदूरी मिलती थी तब भी उसकी जिन्दगी नरक से बेहतर न थी और बेकारी तो जिन्दा ही मौत। ऐसी तकलीफों को सहते मजदूर तैयार करता है बढ़िया से बढ़िया कपड़े, चीनी, मिठाइयाँ और हजारों तरह की सुख-विलास की सामग्रियाँ। वह अपने हाथों से खड़ा करता है बड़े-बड़े महल, बँगले, बाग, ठंढी सड़कें। लेकिन खुद उसके लिए क्या मिलता है? उसकी झोपड़ी शायद ही बरसात में साबित रहती हो। उसके बदन के लिए चीथड़े भी ढँकने के लिए नहीं मिलते। कितनी ही उसकी अपनी बनायी चीजें उसके लिए स्वप्न की-सी मालूम होती हैं और मजदूर की हड्डियों, पसीने और चिन्ता से बनी इन चीजों का उपभोग कौन करता है? उनके खून के गारे से उटी अट्टालिकाओं में विहार कौन करता है? वही बड़ी-बड़ी जोंके-जमींदार, महाजन, मिल-मालिक, बड़ी-बड़ी तनखाहों वाले नौकर, पुरोहित।

किसान और मजदूर जिसके लिए अपनी जवानी धूल में मिलाते हैं, अपनी नींद हराम करते हैं, अपने स्वास्थ्य का सत्यानाश करते हैं, वह उन्हें भूखा-नंगा रख करके ही संतुष्ट नहीं होता, बल्कि पग-पग पर उन्हें अपमानित करना अपना कर्त्तव्य समझता है। किसान और मजदूर गरीब क्यों है? क्योंकि उन्होंने अपनी कमाई परिवार और बाल-बच्चों को भूखा रखकर इन जोंकों को खुशी-खुशी दे दी है। उन्हीं के खून से मोटी हुई ये तोंदे गरीबी के लिए उन्हें लांछित करती है। उनकी भाषा में इन गरीबों के लिए अलग शब्द है। 'आप' की तो बात ही क्या, 'तुम' भी उनके लिए नहीं इस्तेमाल किया जा सकता। 'तू', 'रे', 'अबे' से ही उन्हें संबोधित किया जा रहा है। बुरी से बुरी गालियों को उनके लिए इस्तेमाल करना अमीरी की शान है। उनके ही कारन गरीबी का शिकार मजदूर और किसान उनके सामने चारपाई पर नहीं बैठ सकता, खड़ाऊँ नहीं पहन सकता, छाता नहीं लगा सकता। गाँव के किसान की इज्जत और जानोमाल जमींदार के हाथ में है। वह जैसे चाहता है, उसे नाक रगड़ने को मजबूर करता है।

यह तो हुई वास्तविक धन के उत्पादकों की अवस्था और जोंके? मजदूरों और किसानों की कमाई उनके लिए अर्पित है। वे इसके सोचने की परवाह नहीं करते कि उनकी लाखों की तहसील और मुनाफे का रुपया किस तरह प्राप्त किया गया। क्या वे कभी यह सोचने की तकलीफ करते हैं कि उस एक-एक रुपये का जमा करने के लिए किसान ने अपने बच्चों को कितनी बार भूखा रक्खा? कितनी माताओं ने अपने को नंगा रक्खा? कितने बीमारों ने दवा और पथ्य से महरूम रह कर अपने प्राण छोड़े? यदि उनको ऐसा ख्याल होता तो वे कभी फोर्ड कार की जगह रोल्स-राइस खरीदना पसंद न करते, महीने में हजार-हजार रुपये मोटर के तेल में न फूँक डालते। हाकिमों की दावतों और विलास के जलसों में लाखों का वारा-न्यारा न करते।

यह सब अंधेर होते हुए भी किसी के कान पर जूँ तक नहीं रेंगती। समाज के पंच कह उठते हैं, अमीर-गरीब सदा से चले आये हैं, अगर सभी बराबर कर दिये जायँ तो कोई काम करना पसन्द नहीं करेगा, दुनिया के चलाने के लिए अमीर-गरीब का रहना जरूरी है। समाज की बेड़ियाँ जेलखाने की बेड़ियों से भी सख्त हैं। उन्हें आखों से देखा नहीं जा सकता, लेकिन जहाँ समाज के कानून के खिलाफ-चाहे वह कानून सरासर अन्याय पर ही अवलम्बित क्यों न हो-कोई बात हुई कि समाज हाथ धोकर पीछे पड़ जाता है। कुएँ में पानी है, जगत पर लोटी-डोरी रखी हुई है, एक तरफ मंदिर के आंगन में भक्तिभाव से झूम-झूम कर लोग रामायण पढ़ रहे है- ''जाति-पाँति पूछे नहि कोई। हरि के भजै सो हरि के होई।''

गीता हो रही है-

''विद्या विनय-सम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।

शुनि चैव श्वपाके च पंडिता समदर्शिन:।।''

(विद्या और शील-सम्पन्न ब्राह्मण, गाय, हाथी, कुत्ता और चांडाल सब में पण्डित लोग समदर्शी होते हैं)

महात्मा और पंडित लोग गद्‌गद्‌ होकर अर्थ कर रहे हैं-

''जो है सो सब भगवान्‌ की देन है, सियाराम मय सब

जग जानी। करहु प्रणाम जोरि जुग पानी। चराचर जगत् सब भगवान् के रूप हैं, जो है सो उसमें कोई भेद नहीं।''

मालूम होता है, चारों ओर समदर्शिता, विश्व-बन्धुत्व और प्रेम का महासमुद्र लहरें मार रहा है। उसी समय जेठ की दुपहरी में प्यास का मारा कोई किरती आ जाता है, उसका कदम कुएँ की ओर बढ़ता है, भक्तों में से कोई उसकी जात पहचानता है, कानाफूसी होती है, महात्मा और भक्ति रस में गद्गद् सभी श्रोताओं की त्योरियाँ चढ़ जाती हैं, आंखें लाल हो जाती हैं और सभी मानो जीते जी खा जाने के लिए उस निरपराध व्यक्ति की ओर दौड़ पड़ते हैं? उसका कसूर क्या? क्या कुएँ से पानी पीना अपराध है? क्या समदर्शिता और विश्व-बन्धुत्वा के वायुमंडल में कुएँ से पानी निकाल कर पी लेना महापाप है? और यह मंडली कुछ ही मिनटों पहले जिस राम को अलाप रही थी, उसके रहते क्या ऐसा करना उचित था? उन व्यक्तियों में से एक-एक से अलग-अलग पूछिए-

''तुम्हारे वचन और कर्म में, मन्तव्य और कर्त्तव्य मे इतना अन्तर क्यों?'' घूम-फिर कर आप इसी नतीजे पर पहुँचेंगे कि समाज उनसे वैसा ही कराना चाहता है।

किसी ऊँची जात के माता-पिता की एक छोटी-सी लड़की है। समाज ने मजबूर किया है कि उसकी शादी आठ-दस बरस की उम्र तक हो जाय। ग्यारहवें बरस में वह लड़की विधवा हो जाती है। समाज कहता है, उसकी शादी नहीं हो सकती, अब जिन्दगी भर उसे ब्रह्मचर्य रहना और इन्द्रिय-संयम करना पड़ेगा। कैसा-ब्रह्मचर्य और इन्द्रिय-संयम? जिसके पालन में बड़े-बड़े ऋषि बिलकुल असमर्थ रहे। आज भी उसी विधवा लड़की का पचास साल का बूढ़ा बाप एक स्त्री के मर जाने पर दूसरी से शादी को तैयार है। उसके पच्चीस वर्ष के भाई की स्त्री को मरे महीने से ज्यादा भी नहीं हुआ, लेकिन दूसरी शादी की बाचतीत तय हो रही है। क्या समाज की अक्ल मारी गई है? क्या उसकी आँखों पर पर्दा पड़ गया है? ऐसे समाज के लिए हमारे दिल में क्या इज्जत हो सकती है, क्या सहानुभूति हो सकती है? बाहर से धर्म का ढोंग, सदाचार का अभिनय, ज्ञान-विज्ञान का तमाशा किया जाता है और भीतर से यह जघन्य, कुत्सित कर्म। धिक्कार है ऐसे समाज को! सर्वनाश हो ऐसे समाज का।

जिस समाज ने प्रतिभाओं को जीते-जी दफनाना कर्त्तव्य समझा है और गदहों के सामने अंगूर बिखेरने में जिसे आनन्द आता है, क्या ऐसे समाज के अस्तित्व को हमें पलभर भी बर्दाश्त करना चाहिए? एक गरीब माता-पिता हैं। उनको खुद न अपने खाने-पीने का ठिकाना है, न पहनने-ओढ़ने का। उनके घर में एक असाधारण प्रतिभाशाली बालक पैदा होता है। लड़कपन से ही उसे किसी धनी के बच्चे को खेलाना पड़ता है, भेड़-बकरियाँ चरा कर पेट पालने के लिए मजबूर होना पड़ता है। माँ-बाप जानते तक नहीं कि लड़के को पढ़ाना-लिखाना भी उनका कर्त्तव्य है। यदि वे जानते भी हैं, तो न उनके पास फीस देने के लिए पैसा है, न किताब के लिए दाम। लड़का बड़ा होता है, बूढ़ा होता है, मर जाता है और साथ ही अपने साथ प्रतिभा को लिए जाता है जिसके द्वारा वह देश को एक चाणक्य, एक कालीदास, एक आर्यभट्ट, एक रवीन्द्र, एक रमन दे सकता था। मैने गाँव के एक अभिनेता को देखा है। यदि वह किसी ऐसे देश में पैदा हुआ होता जहाँ प्रतिभाओं के आगे बढ़ने के सारे रास्ते खुले हैं, तो वहाँ वह प्रथम श्रेणी का जगत् विख्यात अभिनेता होता। लेकिन, आज साठ बरस की अवस्था में इस अशिक्षित व्यक्ति की वह महान् प्रतिभा ग्रामीण स्त्री-पुरुष-जीवन के कुछ सजीव चित्रण द्वारा अपने परिचितों का कुछ मनोरंजन मात्र कर सकती है। मैंने ऐसे स्वाभाविक कवि देखें हैं जिन्हें अक्षर का कोई भी ज्ञान नहीं। जिस भाषा को बोलते हैं, उनमें कोई लिखित साहित्य नहीं, कोई आचार्य-परम्परा नहीं, छन्द और अलंकार के परिचय का कोई साधन नहीं, तब भी अपनी भाषा में वे बहुत ही भावपूर्ण, रसपूर्ण कविता कर सकते हैं। शिक्षित जन उनकी कविता को, गँवारू कहकर निरादर करते हैं और इसके कारण वे खुद भी उसे वैसा ही समझते हैं। कवित्व के लिए बाहर से न उन्हें कोई प्रेरणा मिलती है, न प्रोत्साहन, सिर्फ अन्त: प्रेरणा से मजबूर होकर वे कभी-कभी कुछ गा लेते हैं। मैं गाँव के एक लड़के के बारे में जानता हूँ। उसकी माँ विधवा है। नाम मात्र का थोड़ा-सा खेत पुत्र और माता की जीविका का साधन है। लड़का गाँव की पाठशाला में पढ़ने बैठा। असाधारण, मेधावी, गणित में विशेष निपुण। प्राइमरी-स्कूल में उसे छात्रवृत्ति मिली जिसकी सहायता से उसने मिडिल पास किया। वहाँ भी उसने छात्रवृत्ति पाई। यद्यपि पर्याप्त न थी, तो भी किसी तरह वह अपनी पढ़ाई को जारी रख सकता था। मैट्रिक में युक्तप्रान्त से उत्तीर्ण होने वाले कई हजार छात्रों में उसका नम्बर दूसरा या तीसरा था। किन्तु जो एक या दो छात्र उसकी अपेक्षा अधिक नम्बर से पास हुए थे, वे धनियों के लाड़ले थे। उनके ऊपर दो-दो, तीन-तीन अध्यापक घर में अलग रक्खे गये थे। उन्हें हमारे उक्त तरुण

की तरह खाने-पीने की चिन्ता न थी। अबकी बार फिर उसे छात्रवृत्ति मिली। वह कालेज में पढ़ने लगा। फिजिक्स, केमिस्ट्री और गणित उसके विषय थे। छात्रवृत्ति पर्याप्त न थी। इधर स्वास्थ्य भी इतना अच्छा न रहा। उस पर से एक देहाती जगह से आकर तीव्र विद्यार्थियों के लिए मशहूर एक विश्वविद्यालय में उसने नाम लिखाया था। यहाँ छात्रवृत्तियाँ कम थीं। संयोग से एक ही छात्रवृत्ति के लिए तीन विद्यार्थियों के नम्बर बराबर आ गये। छात्रवृत्ति किसको मिलनी चाहिए, इसका निर्णय करते वक्त विश्वविद्यालय ने ऐसे दो विषय ले लिए, जिनमें एक और ही छात्र-जो कि एक धनाढ्य की संतान था-के एक-दो नम्बर अधिक हो गये। किसी ने इसकी परवाह न की कि उस तरुण की प्रतिभा-जो घोर दरिद्रता में जन्म लेकर भी कितनी कठिनाइयों को पार कर यहाँ तक पहुँची थी-का भविष्य क्या होगा? मुझे उस तरुण से साल भर बाद मिलने का मौका मिला। मैंने देखा-उसका चेहरा थाइसिस के रोगी जैसा हो गया है। बदन बहुत दुबला-पतला। मैंने कारण पूछा। तरुण ने बहाना बना दिया। उसके चले जाने पर दूसरे साथी ने बतलाया-''उसे इस साल छात्रवृत्ति नहीं मिली। बहुत कहने-सुनने पर फीस माफ हो गई। खाने-पीने के लिए उसने ट्यूशन पाने की बड़ी कोशिश की, लेकिन न मिला। एक-दो दोस्त अपने साथ रखने का आग्रह करते थे, लेकिन इसे वह अपने आत्मसम्मान के खिलाफ समझता था।'' दूसरे दिन अपनी जानकारी को जतलाते हुए मैंने जब तरुण से पूछा तो उसने उत्तर दिया-''हाँ ठीक है। मैंने ट्यूशन के लिए बहुत कोशिश की, कालेज के घण्टों को समाप्त करके मैं घण्टों इसी फेर से घूमता रहा। लेकिन कहीं कुछ होते-हवाते न देख मैंने उसे अब छोड़ दिया है।'' जिस वक्त मुझे उस प्रतिभाशाली तरुण की इस अपेक्षा को देखने का मौका मिला और यह भी सुना कि वह सिर्फ एक बार थोड़ी-सी खिचड़ी खाकर गुजारा करता आ रहा है, तो सच बताऊँ मेरी आँखों में खून उतर आया। मुझे ख्याल आता था-ऐसे समाज को जीने देना पाप है। इस पाखण्डी, धूर्त, बेईमान, जालिम, नृशंस समाज को तबदील कर देना चाहिए।

एक तरफ प्रतिभाओं की इस तरह अवहेलना और दूसरी तरफ धनियों के गदहे लड़कों पर आधे दर्जन ट्यूटर लगा-लगा कर ठोक-पीट कर आगे बढ़ाना। मैं एक ऐसे व्यक्ति को जानता हूँ जिसके दिमाग में सोलहो आना गोबर भरा हुआ था, लेकिन वह एक करोड़पत्ति के घर पैदा हुआ था। उसके लिए मैट्रिक पास करना भी असम्भव था। लेकिन आज वह एम. ए. ही नहीं है, डाक्टर है। उसके नाम से दर्जनों किताबें छपी हैं। दूर की दुनिया उसे बड़ा स्कालर समझती है। एक बार ''उसकी'' एक किताब को एक सज्जन पढ़कर बोल उठे-''मैंने इनकी अमुक किताब पढ़ी थी। उसकी अंग्रेजी बड़ी सुन्दर थी, और इस किताब की भाषा तो बड़ी रद्दी है?'' उनको क्या मालूम था कि उस किताब का लेखक दूसरा था और इस किताब का दूसरा। प्रतिभाओं के गले पर इस प्रकार छुरी चलते देखकर जो समाज खिन्न नहीं होता, उस समाज की ''क्षय हो'' इसकी छोड़ और क्या कहा जा सकता है। **(स्रोत: पुस्तक 'तुम्हारी क्षय')**

फिर बन जाता भगवान आदमी

अंधभक्तों की
शुरू हो जाती भक्ति
लोग ढूंढ़ते दैवी शक्ति
रचते नकली इतिहास
कर अतिश्योक्ति
फिर मूर्ति-स्थापित कर
करते झूठे
तैयार फरमान आदमी
फिर बन जाता भगवान आदमी
मेले लगते वहां
कब्र पर
अंधभक्तों से सुनकर चमत्कार
वहां पूजा-पाठ करने उमड़ पड़ते
परिवारों के परिवार
भक्ति की शक्ति बताकर
छापते साहित्य
बे-प्रमाण आदमी
फिर बन जाता भगवान आदमी
अंधविश्वास पनपता
चल जाता रोजगार है
बिना शिक्षा,बिना तर्क
सच में अंधकार है।
पूजापाठ छोड़
बनाएं पुस्तकालय,
विद्यालय
या
अस्पताल
अगर रखनी चाहे पहचान आदमी
फिर बन जाता भगवान आदमी।

- डॉ. फूल सिंह लुहानी

वैज्ञानिक दृष्टिकोण

– रणबीर सिंह दहिया

वैज्ञानिक दृष्टिकोण क्यों?

1. प्रकृति और ब्रह्मांड को समझने के लिये
2. समाज के विकास को समझने के लिए
3 मानवता और शांति के लिए

संक्षेप में वैज्ञानिक दृष्टिकोण

दो हरफी बात... 'उतना ही विश्वास , जितने का प्रमाण है'

कारण व प्रभावों का खोजना ही वैज्ञानिक दृष्टिकोण है । अर्थात तार्किक कारणता

मानव की बड़ी ताकत है वैज्ञानिक दृष्टिकोण

जिसके पास नहीं वह कमजोर है और उसका विश्वास है कि ईश्वर है, भाग्य है, लिखा हुआ है, पहले का किया हुआ है, कर्मों का फल है, पिछले जन्मों का पाप है, अशुभ घडी का जन्म है, पृथ्वी पर पाये जाने वाले पशुओं में मनुष्य सबसे कमजोर है। सोचने की बात है कि यह मानव कहे जाने वाला कमजोर पशु समस्त प्रकृति का मालिक कैसे बना ?

460 करोड़ साल पृथ्वी

4 करोड़ साल पहले भालू आये

5 लाख साल पहले मानव जाति का विकास

_ विकास की प्रक्रिया में अंगूठा अन्य चारों उँगलियों से अलग हो गया और चारों उंगलियां भी अलग अलग हो गयी। मनुष्य ने अंगूठे का प्रयोग अन्य चारों उँगलियों पर किया। उसने इन दस उँगलियों को एक औजार में बदला और इस औजार ने अपने चारों और की प्रकृति पर कार्य किया। इसके साथ ही इस गतिविधि द्वारा उसका मस्तिष्क विकसित होना और बढ़ना शुरू हुआ। हजारों वर्ष यह प्रक्रिया चली। श्रम की बदौलत मनुष्य ने प्रकृति पर कार्य करना शुरू किया और जिससे उसका मस्तिष्क विकसित हुआ। सोचते पशु भी हैं । ''मनुष्य एक औजार बनाने वाला पशु है।''

मनुष्य ने दो पैरों पर चलना शुरू किया तो आगे के दो पैरों को हाथों के रूप में विकसित किया और प्रकृति पर कार्य करना शुरू किया। स्वर तंतु भी सीधे हो गए। इसीलिए मनुष्य ने भाषा ईजाद की। प्रकृति के साथ मानवीय हाथों तथा मनुष्यों के साथ भाषा के संवाद से मनुष्य का मस्तिष्क आकार में बढ़ा। यह वृद्धि किसी पूजा पाठ या कर्मकांड या पूजा यज्ञ के कारण नहीं हुई। 50000 पीढ़ियों की विरासत है आपका दिमाग। 5 लाख साल पहले पुराणी खोपड़ियों के खोल की धारिता 750 ग्राम है। आज आपका मस्तिष्क 1500 ग्राम का है।

A. Science will not fail for lack of human capacity, where it fails it will be for lack of social organisations to make use of that capacity.

B. Science in a given time and space, is always relative never absolute.

_ वैज्ञानिक दृष्टिकोण तो दूर की बात है, वैज्ञानिक शिक्षा भी क्या, आज तो शिक्षा ही नहीं है :

_ आज के संदर्भ में बहुत ही महत्वपूर्ण विषय है। इसके दो पहलू हैं – वैज्ञानिक पद्धति और वैज्ञानिक दृष्टिकोण । वैज्ञानिक पद्धति निरीक्षण, तर्क, अनुमान, अनुभव और प्रयोग के आधार पर कार्य करती है। लेकिन जब हम वैज्ञानिक प्रणाली (पद्धति)को मूल्यों के साथ जोड़ते हैं तो वैज्ञानिक मानसिकता का निर्माण होता है। ये मूल्य क्या हैं ? ये मूल्य हैं

स्वायत्तता,

व्यापकता,

निडरता,

विनम्रता,

तथा जिज्ञासा।

हमारे समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विस्तार बहुत ही सीमित हुआ है। यह और ज्यादा होना चाहिए।

अभी भी अन्धविश्वास का बोलबाला है ।

इस दृष्टिकोण की कमी के कारण ही आज का वैज्ञानिक समाज से कटा हुआ है और हमारे समाज में घटित हो रही परिवर्तन की प्रक्रियाओं से अनभिज्ञ, लोगों के जीवन के यथार्थ से दूर दिखाई देता है। ज्ञान विज्ञान कैसे विकसित हुआ इसका ऐतिहासिक सन्दर्भ भी है और इस क्षेत्र में कुर्बानियां भी काफी हैं।

आज के हालात क्या हैं? विज्ञान का मतलब भौतिक

जगत को मान लिया जाता है जबकि सामाजिक क्षेत्र अछूता रहता है। इस प्रकार विज्ञान को भी संकीर्ण दायरे में बांध दिया गया। सवाल यही है कि इसे सामाजिक जीवन का हिस्सा किस प्रकार बनाया जाये? वैज्ञानिकता को आधुनिकता के दौर में समझना है तो आधुनिक तौर तरीकों के अंतर्गत रूप में देखना होगा। आधुनिकतावाद का और वैज्ञानिक रूझान का गहरा अन्तर्सम्बन्ध है। ज्ञान विज्ञान आंदोलन या समाज सुधार आंदोलन का वैज्ञानिक रूझान एक बहुत ही महत्वपूर्ण पक्ष है। यह इसीलिये है क्योंकि साईन्टिफिक टेम्पर सामाजिक जीवन का जरूरी पक्ष है। नव जागरण के दौर में जब कोई समाज बदलता है तो संभावनाएं पैदा होती हैं -हमारे चिंतन के स्तर पर, हमारे सोचने विचारने के स्तर पर और फिर बात पैदा होती है कि यह विचार व्यवहार में कैसे ढले?

संभावित और वास्तविक में बड़ा अंतर होता है। आधुनिकता के कई आयाम हैं और अंतर्विरोध भी हैं। आज का जरूरी काम है इन संभावित बातों को लोगों के सामने लेकर आना तथा इस पर विचार करना कि जो कल्पनाएं या वास्तविक संभावनाएं हो सकती थी, मगर नहीं हो सकी, इसकी व्याख्या व विश्लेषण करने की क्षमता का विकास करना। आज के सामाजिक ढांचे में क्यों बदलाव की जरूरत है? यह विश्लेषण करना कि जो विकास हो सकता था वह वर्तमान ढाँचे में क्यों नहीं कर पाए? इस बात को पूरी तरह से समझ कर, इसे बदलना, इसके अधूरेपन को देखना समझना तथा इसमें मौजूद विकृतियों को समझते हुए इन मूलभूत ढांचों में बदलाव के प्रयत्न करना। जो स्थापित रूप है और जो संभावित रूप है उसमें हमेशा अंतर रहता है।

साइंटिफिक टेम्पर के तीन पक्ष हैं जो एक दूसरे से जुड़े हैं और अलग भी हैं। एकांगीपन से आगे नहीं बढ़ा जा सकता। केवल मात्र वैज्ञानिक पद्धति साइंटिफिक टेम्पर नहीं कही जा सकती। इसके साथ वैज्ञानिक रूझान और वैज्ञानिक मानसिकता का शामिल होना बहुत आवश्यक है। हिटलर के वैज्ञानिक वैज्ञानिक पद्धति के ज्ञाता थे मगर फासिस्ट रूझान और फासिस्ट मानसिकता रखते थे। आज की सबसे बड़ी चुनौती यही है कि वास्तव में साइंटिफिक टेम्पर हमारी चेतना का हिस्सा कैसे बने? वैज्ञानिक पद्धति या तकनीक उतनी जरूरी चीज नहीं जितनी जरूरी चीज वैज्ञानिक मानसिकता और वैज्ञानिक रूझान हैं ।

इसी के साथ फिर विज्ञान और धर्म तथा विज्ञान और नैतिकता के मामले भी जुड़े हुए हैं। डेढ़ सौ साल पहले महात्मा फुले ने कहा था-पेशवा प्रत्येक लड़ाई में जाने से पहले शुभ समय देखा करते थे, अंग्रेजों के विरुद्ध अपना साम्राज्य गंवा बैठे जो कभी शुभ घड़ी नहीं देखते थे और हर लड़ाई जीतते रहे। यह कैसे हुआ? महात्मा फुले कहते थे -''हमारी माताओं और बेटियों की शादियां 36 गुण मिलाकर होती रही हैं, फिर भी वे असमय विधवा हो जाती हैं। अंग्रेज औरतें कोई ऐसी जन्म पत्री नहीं देखती और फिर भी वे संतोषजनक जीवन व्यतीत करती हैं। यह कैसे होता है? साइंटिफिक टेम्पर के जरूरी पहलू हैं कि दुनिया माया नहीं है-वह ठोस है। संसार हमारे बिना भी है। इसे मटेरियलिज्म कहा जाता है। जबकि आदर्शवाद या आध्यात्मवाद में चेतना प्राथमिक है। यह संसार एक स्वतंत्र इकाई है अपने आप में। इसकी अपनी स्वायत्तता है। यह परिधारना भौतिकवादी है, वस्तुगत है। वास्तव में संसार की आब्जेक्टिविटी है। इसके साथ ही दूसरी बात यह है कि यह संसार अपने आप स्वचालित है-अपने आंतरिक दबावों के कारण। यह संसार का संचालन किसी बाहरी शक्ति पर निर्भर नहीं करता। पूरा का पूरा संसार अपने आप अपने नियमों के तहत चलता है। (यह ऑटोनोमस है)। तीसरी बात है कि चमत्कारों में विश्वास नहीं करना है।

एक बात और है कि इस संसार के अन्तर्सम्बन्ध हैं। इसमें एक नियमितता है। बेतरतीब नहीं है यह। इसमें एक रेगुलेरिटी है। कोई दैवीय शक्ति नहीं है जो इस संसार को चलाती है। ज्यादातर धर्म बाहरी शक्ति की बात करते हैं। साइंटिफिक टेम्पर वाला आदमी अंध विश्वासी नहीं है-कट्टरपंथी नहीं है। विज्ञान की दुनिया में कोई बात अंतिम नहीं है। इंसान डोगमैटिक नहीं है। जिद्दी नहीं होता। खुले दिमाग का होता है।

एक टैंटेविनैस होती है। इसमें एक अधूरापन तो होता है। तथ्य पर या सही बात पर आधारित होती है व जाँच परख के बाद ही उस बात या चीज को गलत या सही ठहराया जाता है। यदि मनुष्य ऐसा नहीं करता तो उसकी वैज्ञानिक सोच नहीं है। धर्म विश्वास पर टिका है। विज्ञान विश्वास पर भी अविश्वास करता है तथा अपने निष्कर्ष आस्था पर आधारित नहीं करता बल्कि इसके निष्कर्ष विश्लेषण करने के बाद आते हैं। कई कट्टरवादी वैज्ञानिक क्या क्यों और कैसे के साथ विचार नहीं करते। असल में वैज्ञानिक खोजबीन वाला प्रश्नसूचक स्वभाव रखते हैं। वे बदलने को तैयार होते हैं ,सुनने को तैयार होते हैं। उनकी डेमोक्रेटिक सोच-बराबर की सोच होती है। सबकी

राय को उचित महत्व दिया जाता है। एक खुले समाज में ही साइंटिफिक टेम्पर पनपता है। हर इंसान बराबर है यह खुले दिमाग तथा जनतांत्रिक मान मूल्यों का आधार है। सभी प्रकार की संकीर्णताओं से ऊपर उठकर आधुनिकता, मानवता, जनतंत्र आदि मूल्य वैज्ञानिक में साइंटिफिक टेम्पर के द्वारा ही बनते हैं। इंट्यूशन से, अंदाजे से या रौशनी हो गयी, इन मान्यताओं को तथा अंतर्ज्ञान को विज्ञान प्राथमिक नहीं मानता। इन सब चीजों को जांच परख व तथ्यों के विश्लेषण से एक सिद्धान्त उभरेगा न कि ज्ञान चक्षु पर आधारित चीजें नहीं चल सकती।

Proof with reliable evidence भी साइंटिफिक टेम्पर का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है । तर्क के साथ सोचना भी बहुत आवश्यक पक्ष है मगर महज तर्क या विवेक काफी नहीं हैं , तथा उस चीज का replicable होना भी जरूरी है। ज्यादा से ज्यादा सही हो precision भी एक पक्ष है सिद्धान्त का। यह पद्धति ज्यादा से ज्यादा accuracy की भी मांग करती है तथा उसका quantification भी किया जा सके। (मापने लायक हों) तर्क और तथ्य के आधार पर समान पक्ष लेना तथा भावनाओं के रंग में नहीं रंगना । भावनाओं से ऊपर उठकर मनोगत नहीं वस्तुगत ढंग से निर्ममता के साथ चीजों को देखना।

विज्ञान और नैतिकता के मामले में यह बात सही है कि वैज्ञानिक नैतिकता मानव के हित की बात करती है। संकीर्ण आधारों पर चीजों को नहीं देखा जाता। मानवीय को ज्यादा मानवीय बनाता है विज्ञान व वैज्ञानिक दृष्टिकोण। जादू टोना ही धर्म नहीं है।-यह अन्धविश्वास है। विज्ञान मनुष्य की सहानुभूतियों को विस्तार देता है। विज्ञान का धर्म के मानवतावादी पक्ष से कोई टकराव नहीं है। साइंटिफिक टेम्पर इसका विरोधी नहीं है ।

हमारे संविधान में भी आर्टिकल 51(A)(h) में डायरैक्टिव प्रिंसिपल ऑफ़ स्टेट पॉलिसी के तहत कहा गया है कि यह भारत के हरेक नागरिक का कर्तव्य होगा कि साइंटिफिक टेम्पर, मानवता वाद, स्पिरिट ऑफ़ इन्क्वायरी और रिफार्म का विकास करे।

अब सवाल ये उठता है कि भारत में वैज्ञानिक मानसिकता की जड़ें क्यों नहीं जम पाई और उसका फैलाव क्यों नहीं हो पाया?

यह सही है कि एक समय था जब भारत में वैज्ञानिक मानसिकता थी। बुद्ध और उससे पहले चार्वाक और लोकायत ने उस समय तार्किक सोच को प्रतिपादित किया। वाराहमिहिर, आर्यभट्ट, सर्जन सुश्रुत भी हुए। 7वीं सदी ईसा पश्चात से लेकर 18वीं सदी ईसा पश्चात तक (1000)साल तक अंधकार का युग रहा। कई बेहतरीन राजा थे, बेहतरीन दार्शनिक थे, बेहतरीन सन्त और समाज सुधारक थे मगर वैज्ञानिक कोई नहीं था ।

1 सर्व प्रथम हमारी संस्कृति में सवाल पूछे जाने को प्रतिष्ठा नहीं दी जाती ।

2 हमारे समाज में वैज्ञानिक मानसिकता का प्रसार न होने का दूसरा कारण परिवार में निरंकुशता का होना है।

3 तीसरी बात यह है कि महान व्यक्तियों को देवताओं की तरह पूजा जाना है। आलोचनात्मक विश्लेषण व्यक्तियों का नहीं किया जाता।

4 वैज्ञानिक मानसिकता की राह में चौथी रूकावट हमारे आमजन पर परम्परागत रीति रिवाज का जबरदस्त शिकंजा है ।

5 हमारे देश में वैज्ञानिक मानसिकता के विकास न कर पाने का सब से महत्वपूर्ण कारण जाति-व्यवस्था और पितृसत्ता है।

6 हमारे देश में आज भी ब्रह्म और परब्रह्म है-इन दोनों का मिश्रण है। यही सत्य है बाकी सब मिथ्या है। संसार ही स्वयं में मिथ्या या माया है तो यहाँ वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास कैसे हो ?

साइंटिफिक टेम्पर पर हमला आज कल बहुत तेज हो गया है। वैज्ञानिक विचारों और इतिहास का मिथ्याकरण जोर शोर से किया जा रहा है ।

इन्टॉलरेंस हदें पार करती जा रही हैं

वैज्ञानिक , धर्मनिरपेक्ष और विवेकशील बुद्धिजीवियों का कत्ल कट्टरपंथी ताकतों ने कर दिए हैं। डॉ. नरेंद्र दाभोलकर, गोविन्द पंसारे, एम एम कुलबर्गी, गौरी लंकेश

संक्षेप में वैज्ञानिक नजरिया या दृष्टिकोण जीवन को देखने का एक दृष्टिकोण है, सफल होने का तरीका है और एक अच्छा इंसान बनने का। यदि हम यह विश्व दृष्टिकोण अपनाते हैं, हम अपने जीवन में मौलिक बदलाव कर सकते हैं, अपने सामूहिक जीवन में, अपने सामाजिक जीवन में और यहाँ तक कि अपने देश के जीवन में। आईये हम इस प्रकार के बदलाव के लिए प्रतिबद्ध हों ।

> नफ़रत फैलाने वालों का कोई धर्म नहीं होता,
> लेकिन नफ़रत फैलाने वाले हर धर्म में होते है।
> -शरद कोकास

इतिहासकारों को खास नियमों और कायदों के मुताबिक चलना होता है

- इरफान हबीब

इरफान हबीब से नरेन सिंह राव की बातचीत

हमारे समय के महत्वपूर्ण इतिहासकार प्रोफेसर इरफान हबीब विश्व में अपने अंतरदृष्टिपूर्ण इतिहास लेखन और मौलिक चिंतन के लिए जाने जाते हैं। 83 वर्षीय मार्क्सवादी अकादमिशियन प्रो. हबीब के लेखन ने उस भारतीय इतिहास को, जो औपनिवेशिक और राष्ट्रवादी इतिहासकारों के चंगुल में जकड़ा हुआ था, नई दिशा दी है। उनके लेखन ने इतिहास को देखने और समझने के हमारे नजरिए में आधारभूत परिवर्तन किया है। ऐसे समय में जब उनके साथ के सभी इतिहासकार देश की राजधानी के अकादमिक संस्थानों में जा कर बस रहे थे, वह अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी (ए.एम.यू.) में ही रहकर काम करते रहे। वह उन विरले इतिहासकारों और पब्लिक इंटलेक्चुअल्स में से हैं जिन्होंने अन्याय, शोषण, सांप्रदायिकता और धार्मिक कट्टरपंथ का विरोध किया। अपने छह दशक लंबे सार्वजनिक जीवन में प्रो. हबीब समाजवाद और लोकतंत्र के सपने को संजोकर जिंदगी को न्यूनतम जरूरतों और अत्यंत सादगी के साथ जीते रहे। युवा पीढ़ी के लिए शायद यह किसी सांस्कृतिक झटके से कम न हो कि प्रो. हबीब साइकिल से ही ए.एम.यू. जाते थे, जहां वह प्रोफेसर एमेरिटस थे और वहां सारा दिन बेनागा काम करते थे। प्रस्तुत है नरेन सिंह राव की इरफान हबीब के साथ ए.एम.यू. के इतिहास विभाग के उनके कक्ष में हुई लंबी बातचीत के मुख्य अंश।

- मुखय संपादक।

? धर्मनिरपेक्षता के विचार को आप कैसे देखते हैं?

- **इरफान हबीब:** दुनिया के संदर्भ में धर्मनिरपेक्षता का एक अलग मतलब है और भारत में सुप्रीम कोर्ट ने जो माना है वह अलग है। जहां तक दुनिया में धर्मनिरपेक्षता का ताल्लुक है वह फ्रांस की क्रांति से निकली थी। जॉर्ज जैकब होलिओक ने 1851 में धर्मनिरपेक्षता को यह सोच कर परिभाषित किया कि इस जीवन में जो भी काम किए जाएं वे इंसान के सुधार के लिए हों। इसलिए नहीं हों कि अगले जीवन में भगवान हमको कोई लाभ दें। धर्मनिरपेक्षता का यह अर्थ है कि राज्य (स्टेट), शिक्षा और अन्य सामाजिक कार्यों को अंजाम दे। इसमें यह जरा भी मतलब न हो कि धर्म क्या कहता है। बल्कि यह देखा जाए कि इंसान के लिए कौन-सी चीज बेहतर है। जैसे पुरुष और स्त्री में बराबरी होनी चाहिए, जो कि दुनिया के किसी भी धर्म में नहीं है। जहां शिक्षा में धर्म का कोई दखल न हो। यानी धर्मनिरपेक्षता का अर्थ यह हुआ कि राज्य (स्टेट) को धर्म से पूरी तरह से अलग कर दिया जाए। अगर आप जवाहर लाल नेहरू की जीवनी पढ़ें तो पाएंगे कि उनका भी यही विचार था। लेकिन राधाकृष्णन ने अपनी किताब रिकवरी ऑफ फेथ में यह लिखा कि भारत में धर्मनिरपेक्षता का तसव्वुर बिल्कुल अलग होना चाहिए, यहां यह होना चाहिए कि सभी मजहब बराबर हों। हम (हिंदुस्तानी) यह न मानें कि ईश्वर का कोई रूप नहीं है। और हम 'अंसीन स्पिरिट' (अदृश्य शक्ति) में भी विश्वास रखें जिसको सुप्रीम कोर्ट ने भी मान लिया। मेरे ख्याल में यह बहुत गलत फैसला है, क्योंकि धर्मनिरपेक्षता का तो वही मतलब होना चाहिए जिसे दुनियाभर की अदालतों और राजनीतिक दार्शनिकों ने माना है।

? इसके मद्देनजर क्या हम भारत को एक धर्मनिरपेक्ष देश मान सकते हैं?

- हम एक स्तर पर तो कह सकते हैं, लेकिन इसमें खतरा बहुत है। क्योंकि सुप्रीम कोर्ट ने राधाकृष्णन की व्याख्या को मानकर, संविधान में जो लिखा है उसको बदल दिया। मसलन, मैं आपको याद दिलाता हूं कि हमारे संविधान में यह लिखा है कि

किसी भी सरकारी संस्थान, कॉलेज, यूनिवर्सिटी या स्कूल में या किसी भी अन्य संस्थान में जिसे सरकार से मदद मिलती हो या जिसे सरकार मान्यता देती है, उसमें धर्म की शिक्षा अनिवार्य नहीं हो सकती। सुप्रीम कोर्ट ने संविधान के इस आर्टिकल (अनुच्छेद) को ही पूरी तरह रद्द कर दिया और कह दिया कि धर्म की शिक्षा भी जरूरी है। और अब ये (सत्ताधारी) कह रहे हैं कि सभी धर्मों की शिक्षा बराबर दी जाए! यह कैसे हो सकता है? यह तो मुमकिन ही नहीं है। जब पहली बार भाजपा सत्ता में आई थी तो उसने इसी का सहारा लेकर पूरे एन.सी.ई.आर.टी. के पाठ्यक्रम को बदल कर रख दिया और हर जगह धर्म की शिक्षा लागू कर दी गई। अब जब फिर से वही (भाजपा) सरकार सत्ता में गई है तो गालिबन फिर से ऐसा ही होगा।

? अगर हम भाजपा के इसी एजेंडे पर बात करें, जिसमें शिक्षा के भगवाकरण के तहत समाज विज्ञान को, इसमें खासतौर से इतिहास मुख्य है, विरुपित कर पेश करते हैं, प्रचारित करते हैं। स्कूली बच्चों के दिमाग में बैठाते हैं। इसको हम कैसे देख सकते हैं। इसके किस तरह के दुष्परिणाम देखे जा सकते हैं और भविष्य में क्या हो सकते हैं?

– देखिए जब वे धर्म की शिक्षा दे रहे हैं तो इतिहास (अनुशासन)के अलावा भी दे रहे हैं। पिछली बार इनकी बनाई जो पाठ्य पुस्तकें थीं उनमें देवी-देवताओं के तमाम किस्से दे दिए थे। छिट-पुट कहीं एक-आधा मुसलमान या ईसाई संत के बारे में कुछ जानकारी थी। यह अनुपात 10: 2 का था। यह इतिहास तक ही सीमित नहीं है। इतिहास में ये लोग यह बताने की कोशिश करते हैं कि हमारा इतिहास बहुत पुराना है और हम दुनिया के तमाम देशों से बहुत आगे थे। जैसे कि आर्य भारत से ही गए थे! अब ये लोग यह भी कह रहे हैं, मैंने अभी अखबार में देखा है, कि हमने ही सारी दुनिया को आबाद किया है। आर्य अफ्रीका से नहीं बल्कि भारत से गए थे! यह तो ऐसा इतिहास है कि जिसे सुनकर दुनिया के लोग हम पर हंसेंगे। क्योंकि हम यह कह रहे हैं कि दुनिया के सारे देशों का इतिहास गलत है और हम जो कह रहे हैं वह ही सही है। हमारे पास न तो कोई प्रमाण है और न ही कोई साक्ष्य! लेकिन हैं हम ही सही! मैंने हाल ही में प्रकाशित जर्नल ऑफ इंडियन साइंस को देखा, जिसमें एक वैज्ञानिक का बड़े इत्मीनान से कहना है कि फलां संस्कृत टेक्स्ट (ग्रंथ) 5000 ईसा पूर्व (ई.पू.)लिखा गया। जबकि हकीकत यह है कि यह मुमकिन ही नहीं है। क्योंकि न तो उस जमाने में तांबा मालूम था, न लोहा, न सीसा और न ही ऐसी कोई और धातु। ये लोग यह भी कहते हैं कि उस जमाने में रसायन विज्ञान की फलां किताब लिखी गई थी। जब विज्ञान के जर्नल में वैज्ञानिक ऐसी बातें लिख सकते हैं तो क्या नहीं हो सकता। यह सब काफी लंबे समय से चला आ रहा है, इतिहास को बिल्कुल गलत तरीके से पढना।

वाकणकर (विष्णु श्रीधर वाकणकर) जैसे पुरातत्वविद्, जो कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आर.एस.एस.) से जुड़े थे, वह ऋग्वेद की तारीख 8000 ई.पू. देते थे। जिसका अर्थ यह हुआ कि वह ऋग्वेद की तारीख को दस हजार वर्ष पहले मानते हैं। ऋग्वेद में तांबे का जिक्र है, जो कि दुनिया के इतिहास में 4,500 ई.पू. से पहले कहीं नहीं मिलता। तो कैसे ऋग्वेद 5000 ईसा पूर्व या 8000 ईसा पूर्व में हो जाएगा। कुल मिलाकर ये सब झूठी बातें हैं। लेकिन जब इसकी शिक्षा दी जाएगी तो आदमी को बेवकूफ बनाना बहुत आसान होगा।

? इधर जिस तरह से इतिहास को दुष्प्रचारित किया जा रहा है क्या इसे हम नॉन-हिस्ट्री (गैर-इतिहास) नहीं कहेंगे? ये लोग दावा करते हैं कि यह भी एक प्रकार का इतिहास लेखन (हिस्ट्रिओग्रॉफी) है। उसी प्रकार से जैसे मार्क्सवादी इतिहास लेखन होता है।

–कोई ऐसा नहीं कह सकता। इतिहासकारों को खास नियमों और कायदों के मुताबिक चलना होता है। हर इतिहास लेखन इन नियमों-कायदों पर टिका होता है। जो चीजें इसके मुताबिक ठीक नहीं बैठतीं वे इतिहास नहीं हो सकतीं। यह बिल्कुल गलत ख्याल है कि इतिहास में आप जो चाहें कह दें। यह जरूर होता है कि साक्ष्य इधर का भी है और उधर का भी, तब आपको तय करना होता है। लेकिन ऐसी चीजें बहुत महदूद (सीमित) हैं। इनकी सबसे बड़ी दिक्कत यह है कि इतिहासकारों में इनको साथ देनेवाला कोई मिलता ही नहीं। बस कुछ पुरातत्ववेत्ता हैं। वे ऐसी कोशिशें करते रहते हैं जो कि पुरातत्व विज्ञान के उसूलों के खिलाफ हैं। जैसे यह साबित करने की कोशिश कि भारत में लोहा बहुत पहले से मौजूद था। अब तक तो यह मालूम था कि लोहा 800 ई.पू. में इस्तेमाल हुआ। आप साबित करना चाहते हैं कि यह 2000 ई.पू. ही इस्तेमाल होना शुरू हो गया था। पर अभी तक इन्हें ऐसा कोई पुरातत्वविद् नहीं मिला जो कि यह कह दे कि लोहा 4000 ई.पू. इस्तेमाल में आ गया था! लेकिन इसे साबित करने की कोशिशें चल रही हैं। ऐसी कोशिशें (दुनिया में) और जगह भी चलती रहती हैं,

लेकिन हर जगह दूसरे पुरातत्वविद् भी होते हैं जो कहते हैं कि यह सब गलत है, बेहूदा है। और ऐसे पुरातत्वविद् हिंदुस्तान में भी हैं।

इनके (हिंदुत्ववादी) साथ एक मसला यह भी है कि जो इतिहासकार राजनीतिक रूप से भाजपा में हो सकते हैं वे भी इस सब को (इस तरह के इतिहासलेखन को) नहीं मान सकते। मैं अक्सर कहता हूं कि ये सारे लोग आर.सी. मजूमदार का जिक्र करते रहते हैं, पर जिस तरीके से मजूमदार ने प्राचीन भारत पर लिखा है, अगर उसे एनसीईआरटी की पाठ्य पुस्तकों में दे दें तो कम से कम मुझे कोई ऐतराज नहीं होगा।

? यानी उनके दक्षिणपंथी होने के बावजूद और उनकी व्याख्याओं से असहमतियों के बाद भी आपको एतराज नहीं होगा?

– जी बिल्कुल, मुझे ऐतराज नहीं होगा क्योंकि मजूमदार दक्षिणपंथी उन अर्थों में हैं जहां उनसे असहमतियों की गुंजाइश है। उनका इंटर्प्रिटेशन (व्याख्या) हमेशा हिंदुत्व समर्थक था। वह गांधी जी के सख्त खिलाफ थे। लेकिन जब उनसे कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी ने यह कहा कि वह यह लिख दें कि आर्य भारत से गए थे और यहां नहीं आए थे तो उन्होंने एक साहब का लिखा कि ये शामिल तो किया लेकिन यह कहकर शामिल किया कि यह बिल्कुल गलत है। मजूमदार सबसे पहले एक इतिहासकार हैं। अगर उनका इतिहास मान भी लिया जाए, सिवाय इसके कि गांधी जी की जो बुराई की है और हिंदू महासभा की तारीफ की है, तो हम इसे इतिहास लेखन कह सकते हैं।

–? इसी संदर्भ में अगर हम एरिक हॉब्सबॉम के इस कथन कि 'हिस्ट्री इज द ओपियम ऑफ नेशनलिज्म' ('इतिहास राष्ट्रवाद का अफीम है') को हिंदुत्ववादी ताकतों के राष्ट्रवाद के संदर्भ में देखें तो क्या लगता है? हॉब्सबॉम यह भी कहते हैं कि हर राष्ट्रवाद को विगत में एक ऐसे यूटोपिया की तलाश होती है जिसे वह महिमामंडित करके पुनरुत्थान की बात करता है। हिंदुत्ववादी संगठन भी इसी तरह प्राचीन भारत को स्वर्ण युग बताते हुए आर्य संस्कृति को सिंधु सभ्यता से जोड़ते हैं। इसे आप कैसे देखते हैं?

– हॉब्सबॉम जिसे राष्ट्रवाद कहते हैं जहां दो कौमों की लड़ाई हो, दो राष्ट्रों की लड़ाई हो। जिसमें एक अपनी बढ़ाई करने की कोशिश करता है, दूसरे को नीचा दिखाकर। लेकिन हमारा राष्ट्रवाद या एशिया के दूसरे मुल्कों का जो राष्ट्वाद था वह साम्राज्यवाद के खिलाफ था। इसीलिए आप देखते हैं कि न हिंदू महासभा और न ही मुस्लिम लीग कभी अंग्रेजों के खिलाफ किसी भी संघर्ष में शामिल हुई। यानी इसको राष्ट्रवाद या हिंदू राष्ट्रवाद कहना भी एक तरह से गलत है। क्योंकि हमारे जो राष्ट्रीय आंदोलन की अवधारणा (कॉन्सेप्ट) थी वह अंग्रेजों के खिलाफ लडने् की थी। इसलिए जो हिंदू महासभा सिर्फ मुसलमानों का मुकाबला करती है और जो मुस्लिम लीग सिर्फ हिंदुओं का मुकाबला करती है वह कभी राष्ट्रवादी हो ही नहीं सकती। मूल परिभाषा से ही नहीं हो सकती। जैसा हमें पाकिस्तान से भी सीखना चाहिए, पाकिस्तान के प्रमुख अखबार डॉन में एक साहब ने लिखा कि हमारी बड़ी दिक्कत यह है कि जब हम अपना (पाकिस्तान) नेशनल मूवमेंट देखते हैं तो वह हाकिमों (शासकों) के कभी विरुद्ध नहीं हैं। वह महकूमों (शासितों) के विरुद्ध है मतलब रिआया के विरोध में है। इसमें तो कोई बात नहीं बनती। न उसमें जेल जाना है और न कुछ करना है! सिर्फ चिल्लाना है! यही हाल हिंदू महासभा का था। हुकूमत अंग्रेज कर रहे थे और वे लड़ मुसलमानों से रहे थे! जाहिर है कि यह राष्ट्रवाद नहीं है।

हमें यह भी जानना चाहिए कि जो दूसरों से नहीं सीखता वह कभी क्रिएटिव (रचनात्मक) नहीं हो सकता। अनुकरण (इमिटेशन) क्रिएशन के लिए बहुत जरूरी है। यह कहना कितनी बेवकूफी की बात है कि हमने यूनानियों से नहीं सीखा, फारसी और अरबी खगोल विद्या (एस्ट्रॉनॉमी) से कुछ नहीं सीखा, अंग्रेजों से कुछ नहीं सीखा। क्या तुमने अंग्रेजों से नहीं सीखा? कैसे नहीं सीखा अंग्रेजों से! यह तो बेवकूफी भरी बात है। अगर आप इस तरह की बात करते हैं तो अपने आपको बेवकूफ ही सिद्ध करते हैं। असली राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन में तो ऐसा कहीं नहीं था। बल्कि यह कहा गया कि सिविल लिबर्टी (नागरिक स्वतंत्रता)की अवधारणा हमने फ्रांसीसी क्रांति से ली। इसे राजा राममोहन राय तक कहते थे। राष्ट्रीय स्वाधीनता एक अलग चीज है और राष्ट्रीय उन्माद (नेशनल फर्वर) दूसरी चीज। तो मेरा जो तसव्वुर है उसमें मैं न तो हिंदू महासभा को और न ही मुस्लिम लीग को राष्ट्रवादी मानता हूं।

? आधुनिक राष्ट्र के मूल्यों के संदर्भ में सांप्रदायिकता, जिसका जबरदस्त उभार हमारे समाज के हर क्षेत्र में दिखाई दे रहा है, कैसे लें?

– यह तो मानना पड़ेगा कि जहां भी धर्म होता है वहां बंटवारा होता है। इसी तरह जातिवाद से भी बंटवारा होता है। और ऐसी

तमाम चीजों से समाज बंटता ही है। ऐसे में हमारी कोशिश यह होनी चाहिए कि हम एक ऐसा सेक्यूलरिज्म कायम कर सकें जहां धर्म का प्रभाव कम से कम हो। और दूसरा इतिहास को सच्चाई और ईमानदारी के साथ पेश करें। यानी जो तथ्य हैं वही इतिहास में लिखे जाएं। हम ऐसे इतिहास से ही कुछ सीख सकते हैं। अगर हम सिर्फ शेखी करते रहें और मूंछों पर ताव देते रहें तो फिर हम क्या सीख सकते हैं? हमें सोचना चाहिए कि अंग्रेजों ने भारत जैसे देश पर क्यों कब्जा कर लिया? लेकिन हमने अपनी गलतियों से कुछ नहीं सीखा। अगर हम अपनी आने वाली पीढ़ियों को यह नहीं बताएंगे कि कैसे हमने उस जमाने की न तकनीक सीखी, न ही लड़ाई का तरीका सीखा और न ही विज्ञान सीखा तो हमारे बच्चे अपने भविष्य का सामना कैसे करेंगे? भारत में 1500 ईस्वी के आसपास ही योरोपीय आने शुरू हो गए थे, पर हमने उनसे कुछ नहीं सीखा। उन्होंने हमारी जबान सीखी, लेकिन हमने उनकी जबान नहीं सीखी! हमें यह भी सोचना पड़ेगा कि संस्कृत में हमने भूगोल (जियोग्राफी) पर क्यों कुछ नहीं लिखा। चीनी यहां आए और उन्होंने भारत के बारे में लिखा। हमारा इतिहास पूरा ही नहीं हो सकता अगर ह्वेन त्सांग ने कुछ नहीं लिखा होता। हमारा इतिहास पूरा ही नहीं हो सकता अगर मेगस्थनीज न हों। इसी तरह से हमने दूसरे देशों को कुछ क्यों नहीं दिया? जब तक हम अपनी कमजोरियों को नहीं देखेंगे तब तक अपने आप को नहीं बदल सकते। यह उसी तरह है जैसे कि एक आदमी के लिए याददाश्त जरूरी होती है। मसलन मैं एक दफा बिना देखे सड़क पार कर रहा था और मेरे बिल्कुल पास से होकर एक मोटर निकल गई। मैं डर गया। अब मैं हमेशा देख कर चलता हूं। अगर मेरी याददाश्त ही न हो तो मैं कोई काम ही नहीं कर सकता। इसी तरह से एक राष्ट्र के लिए भी इतिहास होता है। कुल मिलकर मतलब यह कि जहां तक संभव हो हमारी याददाश्त सही होनी चाहिए और कम-से-कम जान बूझ कर खुद तो अपने लिए झूठी बातें न याद रखें। इसी तरह राष्ट्र (नेशन) को भी करना चाहिए कि अपना इतिहास सही रखे ताकि उससे हम सीखें।

? आज के दौर में जो सांप्रदायिकता है, उसकी तुलना औपनिवेशिक भारत और मध्यकालीन भारत से की जाए तो हम क्या फर्क पाते हैं?

-जब आप किसी एक धर्म को मानते हैं तो अक्सर दूसरे धर्म को बुरा और गलत ही समझते हैं। लेकिन सवाल यह है कि क्या आप अपने धर्म के सभी लोगों को एक समझते हैं? एक दौर में हिंदुस्तान एक ऐसा मुल्क था जहां दोनों, हिंदू और मुसलमान, साथ-साथ रहते थे। जहां पहली बार एक मुस्लिम राष्ट्र या एक हिंदू राष्ट्र की कल्पना तब हुई जब भारत में राष्ट्र की अवधारणा आई। मैं अक्सर कहता हूं कि भारत के लिए देशप्रेम तो उसी वक्त होगा जब आप दूसरे मुल्कों को भी देख कर आएं। सबसे पहले जो देशभक्त हुए उन्होंने वतन की तारीफ में लिखा है। कहने का मतलब यह है कि नई अवधारणाएं आने के साथ चीजें बदलती हैं।

जब हमें दूसरे देशों में दिलचस्पी नहीं थी तो हमें उनके बारे में कुछ मालूम नहीं था, ऐसे में देशभक्ति कैसे विकसित हो पाती? देशभक्ति तो रिलेटिव (तुलनात्मक) होती है।

? आपका मतलब है कि सांप्रदायिकता इससे पहले कहीं देखने को नहीं मिलती?

-नहीं, इस रूप में नहीं कि जहां हिंदू और मुसलमान दो बड़ी ताकते हैं और वे एक-दूसरे के खिलाफ खड़ी हैं। उस दौर में पूर्वाग्रह मिलता है।

? इस पूर्वाग्रह की जड़े कहां से शुरू होती हैं?

-यह पूर्वाग्रह तो हमेशा से मौजूद रहा है। इसका जिक्र 'चचनामा' में मिलता है जो कि 'राजतरंगिणी' से भी पहले लिखा गया था और जिसमें सिंध के शासकों का इतिहास मिलता है। जब अरब के लोग यहां आए तो ब्राह्मणों ने कहा कि वे तो गाय का गोश्त खाते हैं और चंडाल हैं। जैसे अल-बरुनी कहते हैं कि ब्राह्मणों ने कहा है कि अगर कोई शख्स हिंदू से मुसलमान हो जाए तो वह फिर वापस नहीं आ सकता क्योंकि उसने तो अपने सारे धार्मिक संस्कार ही छोड़ दिए हैं। यह ग्यारहवीं शताब्दी की बात है और मुसलमान यह समझते थे कि ये (हिंदू) काफिर हैं और बुतपरस्त हैं। यह नहीं कहा कि इनमें जातिवाद है क्योंकि हरेक यह समझता था कि समाज में ऊंच-नीच तो होती है और इनके यहां इस किस्म की ऊंच-नीच है। उस दौर में यकीनन यह कहीं नहीं था कि एक तरफ हिंदू खड़े हैं और दूसरी तरफ मुसलमान।

? यानी इस तरह का विद्वेष (ऐनमॉसिटी) नहीं था?

-जी हां, आज की तरह की दुश्मनी नहीं थी। जैसे विजयनगर के शासक अपने आपको हिंदूराय सुलतान कहते थे यानी वे सुलतान जो हिंदू रायों के ऊपर हों। यहां वे अपने आपको हिंदू नहीं समझ रहे हैं। अपने अधिनस्थों रायों को हिंदू कह रहे हैं। चौदहवीं शताब्दी में यह पदवी आरंभ हुई थी। जाहिर है, उनका

यह कॉन्सेप्ट (अवधारणा) नहीं था कि सुलतान होना कोई बुरी बात है। मुसलमानों का नाम है। हमें तो महाराजा कहना चाहिए। यह भी देखते हैं कि 19वीं शताब्दी के आखिर में हिंदी-उर्दू विवाद शुरू हुआ। जैसे कि गांधी जी ने लाला लाजपत राय को लिखे एक खत में कहा था कि आप बहुत सख्त उर्दू बोलते हैं, आप थोड़ी-सी हिंदी सीख लीजिए, जैसे कि मैं उर्दू सीख रहा हूं। तो उनका (लाजपत राय) उत्तर था, मैं कभी नहीं सीखूंगा। मेरी जबान तो उर्दू ही रहेगी। उन्हें यह बिल्कुल ख्याल नहीं था कि उर्दू मुसलमानों की जबान है। लाला लाजपत राय देवनागरी ठीक से नहीं पढ़ पाते थे। वह बड़ी तकरीरें उर्दू में ही करते थे। जिसमें अरबी और फारसी के खूब लफ्ज होते थे। उन्होंने यह भी कहा था कि तुलसीदास ने भी अरबी और फारसी के लफ्ज इस्तेमाल किए हैं। तुलसीदास को आप धार्मिक कह सकते हैं लेकिन सांप्रदायिक नहीं।

? इधर मिथकों को लगातार व्यवस्थित तरीके से इतिहास बनाकर बड़े पैमाने पर पेश किया जा रहा है। इसका जवाब इतिहास एक अनुशासन के तहत कैसे दे सकता है?

- इतिहास की अपनी पद्धतियां (मैथड्स) होती हैं जिन्हें दुनियाभर में स्वीकारा जाता है। एडवर्ड सईद जैसे लोग जिस सिद्धांत (डॉक्ट्रिन) की बात करते हैं वह इतिहास के लिए बहुत ही खतरनाक है। वह कहते हैं कि हिंदुस्तान के यथार्थ का चित्रण सिर्फ हिंदुस्तानी ही कर सकता है और मुसलमानों का यथार्थ सिर्फ मुसलमान ही लिख सकता है। आखिर यह कैसे हो सकता है? इंग्लैंड का इतिहास अगर रूसी विद्वान नहीं लिखते तो अंग्रेजों के सामंतीकाल का अध्ययन इतना अच्छा नहीं हो पाता। उसी तरह हंगरी के इतिहासकार गोल्डजायर न होते तो इस्लामिक इतिहास पूरी तरह निर्मित ही नहीं हो पाता।

यानी हर देश के इतिहास को दूसरे लोग भी पढ़ते-लिखते हैं और वह काम बहुत महत्त्वपूर्ण होता है, क्योंकि वे नई नजर के साथ चीजों को देखते हैं। इसीलिए इतिहास लेखन चाहे चीन का हो या भारत का, उसके लेखन के तरीके एक ही होते हैं।

? जैसे कि अगर ए.एल. बैशम नहीं होते तो शायद भारत के इतिहासलेखन को नई दिशा नहीं मिल पाती।

-बिल्कुल ठीक है। यही नहीं हिंदुस्तान में तो अंग्रेजों का बहुत ज्यादा योगदान (इतिहास के संदर्भ में) है। हमें मालूम ही नहीं होता कि अशोक नाम का कोई राजा भी हिंदुस्तान में हुआ था। राष्ट्रीय आंदोलन में अशोक और अकबर का नाम कांग्रेस हमेशा एक साथ लेती थी। तिलक ने तो यह तक कहा था कि अगर मैं उत्तर भारत में पैदा हुआ होता तो शिवाजी नहीं अकबर मेरा हीरो (नायक) होता। खैर अकबर का इतिहास तो हमें मालूम था, उस जमाने की फारसी तारीखों के जरिए। लेकिन अशोक के बारे में तो हमें बिल्कुल ही नहीं मालूम था। वह तो अंग्रेजों ने हमें बताया कि अशोक भी ऐसा था, जिसकी वजह से अब हम दुनियाभर में कह पाते हैं कि अशोक कितना बड़ा, उदार और खुले दिमाग वाला शासक था। अगर अंग्रेजों ने इसका अध्ययन नहीं किया होता तो क्या हम यह कह पाते? अंग्रेजों ने हमें इस्लामिक इतिहास के जरिए यह भी बताया कि अरब वैज्ञानिकों की क्या भूमिका थी। अरे भाई, जब तक आप विज्ञान नहीं जानेंगे तब तक आपको कैसे पता होगा कि क्या बात सही है और क्या गलत है। वही लोग तो अरबी वैज्ञानिकों के बारे में बता पाएंगे जिन्हें विज्ञान की समझ हो। आप यूं ही तो अंदाजा नहीं लगा सकते। अगर आप यही समझ रहे हैं कि सूरज ही दुनिया के चारों तरफ घूम रहा है तो आप क्या अंदाजा लगाएंगे कि उन्होंने (वैज्ञानिकों) क्या कहा था या आर्यभट्ट के खोज की क्या महत्ता है।

? मैं यह इसीलिए पूछ रहा हूं क्योंकि जिस तरह से दक्षिणपंथियों के द्वारा मिथक को इतिहास बनाकर लगातार अवाम पर थोपा जा रहा है उसमें तथ्यों पर आधारित वैज्ञानिक दृष्टिकोण वाला इतिहास अवाम तक उस तरह नहीं पहुंच पा रहा है जिस तरह उसे पहुंचना चाहिए?

- सारा मामला संसाधनों पर टिका होता है। मसलन, पिछली दफा भाजपा के सत्ता में आने के बाद जिस तरह राजपूत साहब (जे.एस.) के जरिए एनसीईआरटी में सब कुछ बदलकर रख दिया गया। उसके बाद भारतीय इतिहास कांग्रेस ने एक कमेटी बनाई, जिसका मैं भी एक सदस्य था। इस कमेटी के तहत एन.सी.ई.आर.टी. की पाठ्य पुस्तकों के जवाब में उनकी एक-एक बात को सिलसिलेवार गलत साबित करते हुए अपने सीमित संसाधनों के मुताबिक दो हजार पुस्तिका छापी, जो कि सारी की सारी बिक गईं। लेकिन उससे ज्यादा संसाधन तो हमारे पास थे नहीं। हमारी इस पुस्तिका के जवाब में उन्होंने जो कुछ गलत बातें कहनी थीं वो पचास हजार कॉपियां मुफ्त में बांटकर कह दीं। वे तो मुफ्त बांट सकते हैं, लेकिन हम नहीं बांट सकते हैं। यहां यह भी बता दूं कि उनकी ये पचास हजार कॉपियां करदाताओं के खर्चे पर बंटी थीं। राज्य के संसाधनों का हम उस तरीके से तो सामना नहीं कर सकते। लेकिन हमारी

कोशिश यही होनी चाहिए कि हम जहां तक भी पहुंच पाएं वहां तक पहुंच कर अपनी बात कहें।

अभी भी कई लोग हैं जो अपने-अपने स्तर पर इस तरह के इतिहास को छापकर अवाम तक पहुंचाने की कोशिश कर रहे हैं। मसलन, 'हिस्ट्री ऑफ टेक्नोलॉजी', 'हिस्ट्री ऑफ मिडीवल टेक्नोलॉजी' जैसी कई किताबें छापी जा चुकी हैं। और यह कोशिश पूरी तरह से जारी है। जैसे कि मैं डॉ. ताराचंद और पंडित नेहरू की किताबों का जिक्र कर रहा था, मेरी काफी असहमतियां होने के बावजूद मैं यह कहूंगा कि ये कम से कम काफी इनसाइटफुल इतिहास तो है ही। इसके अलावा अगर हम एन.सी.ई.आर.टी. की रामशरण शर्मा, सतीश चंद्र और बिपिन चंद्रा की लिखी हुई किताबों की बात करें तो यकीनन ये हर लिहाज से बहुत अच्छी किताबें थीं, जिनको इन्होंने (भाजपा) हटा दिया।

इसी संदर्भ में अगर मैं अर्जुन देव की 'वर्ल्ड हिस्ट्री' का जिक्र करूं तो वह बहुत ही उम्दा किताब है। मुझे एक जर्मन स्कॉलर ने इसके बारे में कहा था कि अगर यह किताब जर्मन भाषा में अनुवाद हो जाए तो इसे जर्मनी के स्कूलों में पढ़ाया जा सकता है। तो क्या हमारे यहां कभी यह नहीं बताया जाएगा कि अफ्रीका, लैटिन अमेरिका और स्पेनिश अमेरिका का इतिहास और संस्कृतियां क्या-क्या हैं। क्यों कभी हमारे यहां इसे नहीं पढ़ाया जा सकता? इस शिक्षा की बड़ी अहम भूमिका है। मैं उनसे (जर्मन स्कॉलर) क्या कहता कि हमारे यहां तो ज्यादातर स्कूल बोर्डों ने यह कह दिया कि अफ्रीका और लैटिन अमेरिका को पाठ्यक्रम से निकाल दो! और अब उन्होंने (एन.सी.ई.आर.टी.) उसमें से चीन को भी निकाल दिया है। बताइए कि अगर दुनिया के इतिहास में से चीन गायब हो जाए तो वह क्या इतिहास होगा? अक्सर यहां (भारत में) यह तर्क देकर कि बच्चों पर बहुत ज्यादा पढ़ाई का बोझ पड़ता है, ये सब चीजें पाठ्यक्रम से हटा देते हैं। ये लोग यह नहीं समझना चाहते कि अगर वे ये सब (लैटिन अमेरिका और अफ्रीका का इतिहास) निकाल देंगे तो भारत के लोगों का नजरिया ही बदल जाएगा। और इसका परिणाम यह होगा कि अफ्रीका से नफरत पैदा होगी। कुल मिलाकर यह सब बहुत ही गलत है।

? एक तबके द्वारा लगातार दुष्प्रचारित किया जाता है कि भारत में इस्लाम के आगमन के बाद मुस्लिम शासकों ने हिंदुओं का तलवार के दम पर व्यापक पैमाने धर्मांतरण किया। अब उनकी घरवापसी की बात हो रही है। क्या भारत के मध्यकाल के इतिहास में ऐसा देखने को मिलता है ?

- जहां तक मुगलकाल का सवाल है, शासकों ने जुल्म करने पर मुसलमान किसानों और हिंदू किसानों में कोई फर्क नहीं किया। टैक्स की वसूली में तो उन्होंने हिंदुओं और मुसलमानों दोनों को ही कोई रियायत नहीं दी। जहां तक धर्मांतरण का सवाल है तो उसमें उनकी कोई दिलचस्पी ही नहीं थी। उन्होंने कहीं कोई जबरदस्ती धर्मांतरण नहीं किया। औरंगजेब ने उन जमींदारों को बस कुछ इनाम वगैरह दिए जो मुसलमान हो गए। इससे ज्यादा किसी को कोई ईनाम नहीं दिया। मथुरा इलाके के वृंदावन को लें तो वह मुगल अनुदान से है। टोडरमल के दिए हुए बड़े अनुदान को जहांगीर ने शासकीय अनुदान (इंपीरियल ग्रांट) बनाया। और यह तो आपको मालूम ही है कि औरंगजेब ने भी मंदिरों को छुआ तक नहीं और न ही कभी अनुदान वापस लिया। तो यह सारा इतिहास तो आपके सामने है।

लोगों ने निजी तौर पर धर्म परिवर्तन किया। अगर जमीनों की वल्दियत देखें तो ऐसे कई उदाहरण पाएंगे जहां बेटा मुसलमान है और बाप का नाम हिंदू है। कई मामलों में यह भी देखेंगे कि बाप का नाम मुसलमान है और बेटा हिंदू है और हिंदू रस्म अदा कर रहा है। नाम अपने बाप का देता है। हालांकि उनके बीच शादी-ब्याह के बारे में ज्यादा पता नहीं चलता। जैसा कि मैंने एक जगह लिखा भी है कि जाति व्यवस्था हिंदुस्तानी समाज में बहुत ही रूढ़ और स्थिर थी, जबकि धर्म गतिमान था। लेकिन दलितों की तरफ तो मुसलमानों का भी वही रवैया था जो ब्राह्मणों का था। हालांकि, अकबर ने जरूर एक साहब (दलित) को खिदमत राय का खिताब दिया था! अब आप इस खिताब को देखिए! रुतबा तो राय का दिया, लेकिन आगे खिदमत लगा दिया!

? जिस तरह से 'घर वापसी' जैसे कार्यक्रम चल रहे हैं ?

- देखिए, ये लोग सांप्रदायिकता बढ़ाने के लिए ऐसा करते हैं, क्योंकि इनके लिए मुद्दा यह नहीं है कि वे मुसलमान को हिंदू बनाना चाहते हैं, बल्कि मुस्लिम दुश्मनी उनका मुद्दा है। अब जैसे ब्लैस्फेमी (ईश-निंदा) है। पाकिस्तान में यह हिंदुओं और ईसाइयों पर लागू हो रही है। लेकिन यह (ब्लैस्फेमी) तो उन पर लागू ही नहीं हो सकती। ईश-निंदा की जो सजा है वह सिर्फ मुसलमान को ही मिल सकती है।

(स्रोत - पत्रिका 'समयांतर')

तर्कशील सोसायटी की तेईस शर्तों की रागनी

जीत जांड़ली

(रागनी)

तर्कशील सोसायटी की मैं शर्त गिनाऊं सारी,
एक शर्त कोई पूरी कर बणो लाखों का अधिकारी, (टेक)

1

देवपुरष संत सिद्ध योगी जिसनै करली भक्ति हो,
ओझे मौलवी फकीर पीर जादूगर शामिल चुगती हो,
ज्योतिषी सब स्याणे सुनल्यो जिसमैं कोय शक्ति हो,
एक शर्त कोई पूरी करदयो ईनाम लाख कई नगदी हो,
खुली चुनौती सोसायटी की स्वीकार करो नर नारी ।।

2

सीलबंद करंसी नोट का नम्बर कोय पढ़णिया हो,
किसे नोट की ठीक नकल उसे टेम करणिया हो,
ना जलै आग मैं आध मिनट तक नंगे पां ठहरणिया हो,
मूंह मांगी चीज हवा मैं तै करके पेश धरणिया हो,
मन्त्र से वस्तु तोड़ मोड़दे हल्की हो या भारी।।

3

टैलीपैथी से किसी व्यक्ति के जो भी पढ़ विचार सकै,
एक इंच कटया अंग बढ़ाके कर शक्ति का प्रचार सकै,
योगशक्ती से उड़ै हवा मैं जो कर गगनविहार सकै,
दस मिनट तक नब्ज रोकदे वो भी कर स्वीकार सकै,
पानी के उपर पैदल चालै ना क्यांहें की असवारी।।

4

एक स्थान पर शरीर छोडदे दूजी जगह दिखाई दे,
आधे घंटै सांस रोकदे वो भी आन दूहाई दे,
पुनर्जन्म की अदभूत भाषा बोलै हमें सुनाई दे,
आत्मज्ञानी भक्ति शक्ति से करके दिखा कमाई दे,
प्रेतआत्मा पेश करै जा जिसकी फोटो तारी।।

5

तालाबंद कमरे से हो बाहर कोय आवणिया,
छुपाई गई किसी चीज को शक्ति से टोहके ल्यावणिया,
पानी का शराब तेल दारू का खून बणावणिया ,
तर्कशीलां नै फिक्स टेम मैं हो नुकसान पहोचांवणिया,
किसी वस्तु का वजन बड़ादे योगी जोगी तपधारी।।

6

आग लगै कपड़े कटै इसी घटना का मकान हो,
भूत प्रेत दिव्य शक्ति का वहां देवणिया प्रमाण हो,
मानस का दे बणा जानवर इसा जादूगर बलवान हो,
किसी साज बाज को मन्त्र से बंद करनिया इंसान हो,
कहै जीत सिंह जांड़ली आला तेईस शर्त करी जारी।।

हरियाणवी गजल

राज अर दौलत का लालच खेल खेल्लै सै।
जंग म्हं जग नै बुरी मनसा धकेल्लै सै।।
दो लड़ैं जिब तीसरा हथियार बेच्चणिया
फायदा ठावै स मंहगा माल् पेल्लै सै।
फोज म्हं गभरू मरैं सैं आम जनता के
सिरफिरा हाकिम त बस जल्दी बगेल्लै सै।
तूं कदे तो पूछ ले दुखड़ा सिपाही का
रात दिन जो मौत गेल्यां फाग खेल्लै सै।
सीमा पै लड़णा सही सै देश की खात्तर
पर उरै तो तूं निरी बकवास पेल्लै सै।
नीत अर नीती जड़ै गन्दी वजीरां की
देश की रैयत उड़ै सौ कष्ट झेल्लै सै।
पेट की असली लड़ाई वो हि जाणै सै
जीण खात्तर जोण पाप्पड़ रोज बेल्लै सै।
दो घड़ी भी धूप तो जो सह नहीं सकदा
फेसबुक पै युद्ध का वो ज्ञान पेल्लै सै।
चुण लिये जां भूल म्हं चै बेबसी म्हं तो
हिटलरां नै भी या जनता खूब झेल्लै सै।
लोकतन्तर म्हं कमी भी सैं मगर खड़तल
लीडरां नै बोट की ताकत नकेल्लै सै।

मंगत राम शास्त्री खड़तल

मैं

... **मुनेश त्यागी**

मैं आधा हिंदू हूं, आधा मुसलमान हूं,
कोई माने ना माने,मैं पूरा हिंदुस्तान हूं।

मैं पाखंडों से लड़ता हुआ,
जहर देकर मारा जाता हुआ
मैं मैदान-ए-जंग में लड़कर
मरता हुआ
मंगल पांडे हूं,
मैं काकोरी कांड का मुखिया
राम प्रसाद बिस्मिल हूं,
मैं काकोरी का सजायेमौत
पाने वाला अशफाक उल्ला खान हूं।
मैं दंगों की भेंट चढ़ा
गणेश शंकर विद्यार्थी हूं,
मैं फांसी के फंदे को चूमता
हुआ राजगुरु, सुखदेव और
शहीद ए आजम भगत सिंह हूं,
मैं अल्फ्रेड पार्क में खुद ही गोली
खाता हुआ चंद्रशेखर आजाद हूं,
मैं इंग्लैंड में जाकर डायर को मारने
वाला ''मोहम्मद सिंह आजाद''
अर्थात उधम सिंह हूं।
मैं मेरठ षड्यंत्र केस का आजन्म
सजायाफ्ता मुजफ्फर अहमद हूं,
''तुम मुझे खून दो मैं तुम्हें आजादी दूंगा''
का मैं सुभाष हूं,
मैं कर्नल ढिल्लों हूं, मैं कर्नल सहगल हूं,
मैं जनरल शाहनवाज हूं।
मैं जुलूस हूं ,,,
साझा हिंदुस्तान के लिए,
बराबरी वाले हिंदुस्तान के लिए,
इंसाफ वाले हिंदुस्तान के लिए।
गुलामी, दास्तां और बेडियों से
मुझ मुसलमान को भी
उतनी ही नफरत है
जितनी किसी हिंदू को,
संघर्ष, बलिदान और आजादी
मुझ हिंदू को भी उतनी ही प्यारी है
जितनी मुसलमान को।
मैं आज भी सांझी तहजीब का
अविराम अभियान हूं।
मैं संघर्षों का इतिहास हूं,
मैं दरिंदों का परिहास हूं,
काट कर देख लो बोटी बोटी मेरी,
मैं सर से पांव तक हिंदुस्तान हूं।
मैं जुल्म से, जहल से,
झूठ से, लूट से,
लड़ता हुआ आदमी-औरत
यानी इंसान हूं।
मैं कल कारखानों में लड़ता
हुआ मजदूर हूं,
मैं खेत खलियान में खुद को
खपाता किसान हूं।
मैं मानव मुक्ति का गुलनार तराना
गाता हुआ इंकलाब जिंदाबाद हूं ।
मैं हिंदू आधा हूं, मैं आधा मुसलमान हूं,
मैं सच सच कहता हूं,मैं पूरा हिंदुस्तान हूं।

(लंबी कविता के अंश)

टक्कर

हर ज़ोर जुलम की टक्कर में
संघर्ष हमारा नारा है
संघर्ष हमारा नारा है
समझौता ? कैसा समझौता
हमला तो तुमने बोला है
महँगाई ने हमें निगलने को
अपना मुँह खोला है
हम मौत के जबड़े तोड़ेगे
एका हथियार हमारा है।
हर ज़ोर जुलम की टक्कर में
संघर्ष हमारा नारा है
संघर्ष हमारा नारा है।

- शंकर शैलेन्द्र

कोटवार के सामाजिक बहिष्कार के मामले पर कार्यवाही हो

– डॉ. दिनेश मिश्र

गृह मंत्री को पत्र

सामाजिक बहिष्कार के सम्बंध में सक्षम कानून बने

अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति के अध्यक्ष डॉ दिनेश मिश्र ने बताया ग्राम खजरी पौनी, बिलाईगढ़, जिला बलौदाबाजार से सामाजिक बहिष्कार का एक मामला आया है जिसमें वहॉ के कोटवार दूधनाथ साहू उसके तथा उसके भाई के परिवार को समाज से न केवल बहिष्कृत कर दिया गया। यह फरमान भी दिया गया कि उस परिवार से यदि कोई बात करेगा तो उस पर 50 हजार रुपये जुर्माने लिया जाएगा, उन पर पूरी तरह से पाबन्दी लगा दी गयी है, उक्त परिवार का गली गांव में निकास, सामाजिक कार्यक्रमों में शामिल होने, हुक्का पानी बंद कर दिया गया है जिससे उक्त परिवार के सदस्य परेशान हो गए हैं, किसी भी व्यक्ति का सामाजिक बहिष्कार अनुचित और अमानवीय है। डॉ. मिश्र ने प्रदेश के गृहमंत्री श्री ताम्रध्वज साहू को पत्र लिख कर इस मामले में कार्यवाही की मांग की है।

डॉ मिश्र ने कहा ग्राम के कोटवार दूधनाथ साहू और बहिष्कृत परिवार के सदस्यों ने बताया कि शिकायत भी की है पर कार्यवाही न होने से सामाजिक पंचों के हौसले बुलंद हैं, उक्त परिवार कमजोर आर्थिक परिस्थिति के हैं और बार बार इस प्रकार की प्रताड़ना होने से गांव में अपमानित और असुरक्षित महसूस कर रहा है., देश का संविधान हर व्यक्ति को समानता का अधिकार देता है। सामाजिक बहिष्कार करना, हुक्का पानी बन्द करना एक सामाजिक अपराध है तथा यह किसी भी व्यक्ति के संवैधानिक एवम मानवाधिकारों का हनन है , प्रशासन को इस मामले पर कार्यवाही कर पीड़ितों को न्याय दिलाने की आवश्यकता है। साथ ही सरकार को सामाजिक बहिष्कार के सम्बंध में एक सक्षम कानून बनाना चाहिए.ताकि किसी भी निर्दोष को ऐसी प्रताड़ना से गुजरना न पड़े। ताकि हजारों बहिष्कृत परिवारों को न केवल न्याय मिल सके बल्कि वे समाज में सम्मानजनक ढंग से रह सकें।

9827400859

नज़्म

ख़ून अपना हो या पराया हो
नस्ल ए आदम का ख़ून है आखिर
जंग मशरिक में हो या हो माग़रिब में
अम्न-ए-आलम का ख़ून है आखिर !
बम घरों पर गिरें कि सरहद पर
रूहे-तामीर ज़ख्म खाती है
खेत अपने जलें या औरों के
जीस्त फ़ाकों से तिलमिलाती है !
टैंक आगे बढ़ें या पीछे हटें
कोख धरती की बांझ होती है
फ़तेह का जश्न हो या हार का सोग
जिंदगी मय्यतों पे रोती है !
जंग तो ख़ुद ही एक मसला है
जंग क्या मसअलों का हल देगी
ख़ून और आग आज बरसेगी
भूख और एहतियाज कल देगी !
इसलिए ऐ शरीफ इंसानों
जंग टलती रहे तो बेहतर है
आप और हम सभी के आंगन में
शम्मा जलती रहे तो बेहतर है !!!

– साहिर लुधियानवी

ब्रह्माण्ड के रहस्य खोलने वाले महान वैज्ञानिक स्टीफन हॉकिंग का एक कथन: ''जब कोई मुझसे पूछता है कि क्या मैं इस बात में विश्वास करता हूँ कि ईश्वर ने ब्रह्माण्ड की रचना की है,तो मैं उनसे कहता हूँ कि सवाल का कोई मतलब नहीं है। बिग बैंग से पहले समय का कोई अस्तित्व नहीं था, इसलिए ईश्वर के पास ब्रह्माण्ड की रचना के लिए कोई समय नहीं था। यह धरती के किनारे की दिशा पूछने जैसा है, यह पृथ्वी गोलाकार है, जिसका कोई किनारा नहीं है,इसलिए इसके किनारे की तलाश करना व्यर्थ की कवायद है। मैं इस सामान्य व्याख्या में विश्वास करता हूँ कि कोई ईश्वर नहीं है।किसी ने ब्रह्माण्ड को नहीं बनाया और कोई हमारे भाग्य का निर्देशन नहीं करता है।इससे मुझे लगता है कि संभवत: कोई स्वर्ग नहीं है और जीवन के बाद कुछ नहीं।''

तर्कशील सोसायटी हरियाणा की बैठक संपन्न

तर्कशील सोसायटी हरियाणा की एक बैठक का दिनांक 22-5-22 को सैनी धर्मशाला-पूंडरी मे आयोजन किया गया। मीटिंग में हरियाणा के विभिन्न इकाइयों एवं जिलों के कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। मीटिंग की अध्यक्षता सोसायटी के प्रदेशाध्यक्ष फरियाद सिंह सनियाना ने की । मीटिंग में सोसायटी के विभिन्न कार्यकर्ताओं एवं पदाधिकारियों ने अपने अपने विचार रखे।

मीटिंग में सर्वप्रथम रामेश्वर दास ने, जोकि पेशे से हरियाणा पुलिस मे सब-इंस्पेक्टर के पद पर हैं, अपनी बात रखते हुए कहा कि वर्तमान दौर में सरकार के विरोध में अथवा देवी देवताओं पर आलोचनात्मक टिप्पणी करने से लोगों पर मुकदमे दर्ज करवा दिए जाते हैं, इन सबसे घबराने की कोई जरूरत नहीं है। बस हमें वैज्ञानिक सत्य पर अडिग रहते हुए अपनी बात रख देनी चाहिए।

मा. राकेश कुमार ट्रीमैन का कहना था कि सजावटी पौधे केवल दिखावट के लिए ही होते हैं, इनका पर्यावरण को कोई लाभ नहीं होता। इनकी बजाय यदि हो सके तो घरों में भी छायादार एवं फलदार पौधे लगाने चाहियें।

कार्यक्रम में मुख्य वक्ता के तौर पर बलजीत भारती ने द्वंद्वात्मक भौतिकवाद पर व्याख्यान दिया। द्वंद्वात्मक भौतिकवाद जैसे गंभीर विषय को बेहद आसान शब्दावली मे साथियों को समझा देना बलजीत भारती जी की विशेष उपलब्धि माना जा सकता है।

अपनी बात रखते हुए सोसायटी के प्रचार सचिव सुभाष तितरम ने कहा कि दुनिया के दूसरे देश विज्ञान एवं तकनीकी विकास में खूब तरक्की करते जा रहे हैं परंतु भारत में समाज को पुरातन परंपरा एवं संस्कृति की दुहाई देकर देश को पिछड़ेपन की तरफ धकेला जा रहा है।

पूंडरी इकाई के सचिव कृष्ण हलवाई ने मीटिंग में पहुंचे सभी कार्यकर्ताओं का स्वागत करने के साथ साथ अपनी बात रखते हुए बताया कि जब इनसान अपने विवेक का इस्तेमाल करता है तब वह तर्कशील ही होता है, परंतु हमारे समाज में अधिकतर लोग अपनी इस तर्कबुद्धि का इस्तेमाल अपने निजी हितों के लिए ही करते हैं। इसके बाद अपनी बात रखते हुए करनाल इकाई के प्रधान डा. परमानंद ने कहा कि विपरीत परिस्थितियों के बावजूद तर्कशील लोग मानवता के हित मे काम करते आ रहे हैं और मानवता के हितों के लिए कार्य करते ही रहेंगे। बैठक को संबोधित करते हुए पूंडरी इकाई की कार्यकर्ता मैडम शशि मान सिंह ने कहा कि अगर एक शिक्षक सही मायने में वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपना कर बच्चों को शिक्षा प्रदान करे तथा प्रत्येक विषय को तर्कपूर्ण ढंग से समझाए तो समाज में हर हालत में बदलाव लाया जा सकता है। मीटिंग में राजेश रंगा, कृष्ण राजौंद एवं मा. बजिंद्र सिंह ने भी अपने अपने विचार साझा किए।

मीटिंग में अपनी बात रखते हुए 'तर्कशील पथ' पत्रिका के संपादक बलवंत सिंह ने कहा कि केवल उच्च शिक्षा प्राप्त कर लेना तथा बडी बडी डिग्रियां हासिल कर लेना ही बेहतर इनसान होने का मापदंड नहीं हो सकता। समाज में जमीनी स्तर पर कार्य करते हुए देखा जा सकता है कि बडी बडी डिग्रियां हासिल करने वाले लोग भी अंधविश्वास की दलदल में आकंठ डूबे रहते हैं और बहुत से कम पढ़े लिखे लोग पूरी तरह से वैज्ञानिक दृष्टिकोण के अनुसार कार्य करते हैं।

मीटिंग के अंत में सोसायटी के प्रदेशाध्यक्ष फरियाद सिंह सनियाना ने अपने अध्यक्षीय भाषण में सभी कार्यकर्ताओं से अपील की कि समाज में भाईचारा कायम रखने के लिए वैज्ञानिक दृष्टिकोण वाले समाज की अत्यंत आवश्यकता है। ऐसे शोषण मुक्त समाज के निर्माण में तर्कशील कार्यकताओं की महत्वपूर्ण भागीदारी रहनी चाहिए। उन्होंने ने आगे कहा कि शोषण विहीन समाज के निर्माण के लिए हमें पहले खुद गहन अध्ययन करने की तथा तर्कशील साहित्य को आम जनता तक पहुंचाने की बहुत अधिक जरूरत है। मंच का संचालन का कार्य सोसायटी के उपाध्यक्ष राजेश पेगा द्वारा बखूबी निभाया गया।अंत में पूंडरी इकाई के प्रधान मान सिंह पूंडरी द्वारा मीटिंग में शामिल सभी साथियों का हार्दिक धन्यवाद किया गया।कार्यक्रम के आयोजन में पूंडरी इकाई के सभी कार्यकर्ताओं का सराहनीय योगदान रहा।

सुभाष तितरम द्वारा तर्कशील साहित्य की स्टाल भी लगाई गई, जिसमें बहुत से साथियों ने तर्कशील साहित्य की खरीदारी की।

रिपोर्ट: बलवंत सिंह

सुनहरी ताबीज

प्रवीण जंड़वाला

चेतना का सफ़र गौरवमयी है। सब्र और प्रेरणा से भरा हुआ। इस मार्ग पर चलते हुए मुश्किलों से दो-चार होना स्वाभाविक है। वक्त भी इंम्तहान लेता है। पर चलते रहने से नज़र आ रही मंजलि बैठने नहीं देती। अपने रोज़मर्रा के कामकाज करते हुए हम लोगों को तर्क से सोचने, समझने के लिए प्रेरित करने के लिए जुटे रह सकते हैं। आसपास घट रही रहस्यमयी घटनाओं का विश्लेषण कर सकते हैं और लोगों के मन से अंधविश्वासों का हौवा दूर करने की कोशिशें करते रह सकते हैं। स्कूल, आॅफिस में नए पाठक बनाने के यत्न मन को सकून देते हैं। इस कार्य को करते हुए बहुत से नए रास्ते भी निकलते हैं, जो खुशियों का बहाना बनते हैं।

मेरी दुकान पर आने वाले इस तरह की चर्चा में शामिल होते रहते हैं। जब 'तर्कशील' मैगज़ीन उनकी नज़रों के सामने से गुजरता है तो उनकी सोच करवट लेने लगती है। कई साल पुरानी बात है- मेरा पड़ोसी दुकानदार सुधीर मेरे विचारों से प्रभावित होने लगा। वह अंधविश्वासी परिवार में पला-बढ़ा था। मेरी संगति में तर्कशील विचारों का समर्थन करने लगा। तथाकथित बाबाओं, तांत्रिकों बारे में चर्चा होती तो वह उनकी ठगी और झूठ की दुकानदारी बारे अपने अनुभव सांझा करता और कहता कि इतनी देर से वैसे ही धागे ताबीजों में सुख ढूंढते रहे। पर अपने विवाह के बाद वह इन विचारों से दूरी बनाने लगा। घर परिवार के माहौल ने उसकी अक्ल पर ऐसा पर्दा डाला कि वह पुन: अंधविश्वासों का शिकार हो गया। मेरे पास कभी-कभार काम धंधे के लिए ही आता और चुपचाप लौट जाता। विवाह के एक वर्ष बाद भी बच्चा न हुआ तो उसका परिवार बाबाओं-तांत्रिकों की दरों पर भटकने लगा।

एक दिन शाम को दुकान बंद करते समय मुझे काउंटर के नीचे पड़ा हुआ एक ताबीज नज़र आया। मैंने उठा लिया। वह तांबे के लॉकेट में बंद था। पूछने पर पता चला कि सुधीर दुकान पे कोई सामान लेने आया था। मुझे समझने में देर नहीं लगी। मैं ताबीज़ अपने पर्स में डाल कर घर आ गया। घर आकर उसे खोला। उसमें से सफेद रंग की एक पर्ची निकली। इसमें बारह खाने बने हुए थे। उन में समझ न आने वाली भाषा में कुछ लिखा हुआ था। मन ही मन मुझे भोले-भाले और पिछलग्गू लोगों की मानसिकता का ख्याल आया जो इन कागज के टुकड़ों से अपनी इच्छाओं की पूर्ति का भ्रम पालते हैं। ताबीज़ मेरे सामने खुला पड़ा था। एक विचार मेरे दिमाग में घूमा। मैंने ताबीज़ वाले टुकड़े जैसा ही सफेद कागज का एक और टुकड़ा लिया। उस पर उसी की तरह बारह खाने बनाए। सभी खानों में बारी-बारी अपना नाम लिख दिया। अपने नाम वाला कागज लॉकेट में डाल दिया। अगले दिन दुकान पर पहुंच कर मैंने सुधीर को संदेश भेज कर बुलाया कि वह अपनी गुम हुई चीज वापस ले जाए। वह न आया तो मैं उसकी दुकान पर जाकर बिना कोई टिप्पणी किए ताबीज़ उसे दे आया।

कई महीने उससे मुलाकात नहीं हुई। एक दिन अचानक वह फिर मेरे पास दुकान पर आया। खुशी के मूड़ में था। मेरे पूछने पर कहने लगा कि बाबा का ताबीज़ अपना रंग लाया है। मेरे घर लड़का हुआ है। मैं तो आप के बहकावे में आकर यूं ही बाबाओं को बुरा-भला कहने लगा था। ताबीज़ का और कमाल देखो- डॉक्टर कहते थे कि बच्चा ऑपरेशन से होगा। बाबा जी के पैर पकड़े तो वह कहने लगे कि वही ताबीज़ मां बनने वाली औरत के माथे से तीन बार स्पर्श करवा देना। बच्चा सामान्य प्रसव से पैदा हो जाएगा। मैंने सत्य वचन जानकार वही किया। ऑपरेशन की ज़रूरत ही न पड़ी। मुझे उसकी बात पर हंसी आई। मैंने उसी वक्त ताबीज बदलने का राज नहीं खोला। कई महीने बाद मित्र मंडली में बैठे हुए मैंने सुधीर की हाज़िरी में उसे बताया कि जिस ताबीज़ का गुणगान वह कर रहा है, वह तो मैंने बदल दिया था। ताबीज़ वाले समझ न आने वाले अक्षरों की जगह मैंने कागज के नये टुकड़े को ताबीज़ में डालकर उसे दिया था। सुधीर परेशान नज़र आया। सुन रहे सभी मित्र भी हैरान हुए। सुधीर बोला- आज मेरी आंखें खुल गई हैं। आप बिल्कुल ठीक और सच कहते हैं कि बाबाओं की दुनिया झूठ-मक्कारी की है। ताबीज़ आप के नाम वाला चल गया और हम वैसे ही बाबाओं की जय जयकार करते रहे। ताबीज़ के बिना भी काम चलता था। प्रसव डॉक्टर को बार-बार कहने से सामान्य हो गया। वैसे ही बाबा के खाते में चला गया । अब सब समझ गए कि बाबाओं के ताबीज़ अंधविश्वासों में फंसे लोगों की लूट का साधन में बनते हैं। आपको तर्क और ज्ञान का सुनहरी ताबीज़ सीधे रास्ते पर चलने को कहता है। सुधीर का यह वाक्य उस घटना का हासिल था।

अनुवाद- मुलख पिपली

प्रकाश प्रदूषण

बूटा सिंह वाकफ़

मानव के धरती पर जन्म और विकास के करोड़ों वर्षों के दौरान उसके प्राकृतिक व्यवहार, मनोस्थितियों, सोने की आदतों और काम करने के तरीकों को केवल रोशनी ने ही प्रभावित किया था। पत्थर युग में आग की खोज ने मनुष्य के इस व्यवहार को किसी हद तक प्रभावित किया। जैसे ही मनुष्य ने विज्ञान के युग में कदम रखा तो विद्युत और विद्युत बल्ब की खोज हुई। उसने अपनी सोचने की शक्ति और सख्त मेहनत से दुनिया के हर अंधेरे कोने को रोशन कर डाला। दिन और रात के फासले मिटा दिए। रात के अंधेरे में कृत्रिम रोशनी पैदा करने के बाद मानव दिन-रात मशीन की तरह काम करने लगा। यह एक युग परिवर्तन जैसी कोशिश रही है। इस ने अगर मनुष्य की तरक्की में काफी योगदान दिया है तो दूसरी ओर कृत्रिम रोशनी ने मनुष्य समेत तमाम जीव-जंतुओं को बेहद प्रभावित किया है। इससे पहले हम जानें कि प्रकाश प्रदूषण क्या होता है, आओ पहले रोशनी के स्रोतों के बारे में बात करें। रोशनी के स्रोतों को दो मुख्य भागों में बांट सकते हैं-

प्राकृतिक स्रोत- प्रकाश के प्राकृतिक स्रोत वह हैं जिनसे हमें प्रकाश प्राकृतिक तौर पर प्राप्त होता है। हमारी धरती के लिए सूर्य रोशनी का मुख्य प्राकृतिक स्त्रोत है। चंद्रमा से प्रतिबिंबित होने के कारण प्राप्त होने वाली रोशनी भी प्राकृतिक रोशनी है। रात को आकाश में चमकते तारे भी रोशनी के प्राकृतिक स्रोत हैं।

कृत्रिम स्रोत - प्रकाश के प्राकृतिक स्रोतों के अलावा अन्य जो भी स्रोत मनुष्य द्वारा तैयार किए गए हैं, सभी कृत्रिम स्रोत हैं। घरों, सड़कों, गलियों, बाजारों आदि में रंग-बिरंगी रोशनी पैदा करने वाले बल्ब, ट्यूबें, सोलर लाइट, सर्च और फ्लड लाइट, सजावट के लिए इस्तेमाल की जाने वाली लाइटें, वाहनों की लाइटें आदि से पैदा होने वाला प्रकाश कृत्रिम प्रकाश कहलाता है।

प्राकृतिक रोशनी के रास्ते में रुकावट पैदा करने वाली नकली रोशनी ही प्रकाश प्रदूषण का मुख्य कारण है। नकली रोशनी का बेवजह इस्तेमाल आम लोगों, समाज और प्राकृतिक क्रियाकलापों के रास्ते में रुकावट पैदा करता है। इसको प्रकाश प्रदूषण कहा जाता है। दूसरे शब्दों में, प्रकृतिक रोशनी की ग़ैर मौजूदगी में नकली रोशनी का फैलाव या जिस जगह ज़रूरत न होते हुए भी नकली रोशनी मौजूद हो, प्रकाश प्रदूषण कहलाता है। इस प्रदूषण के दायरे में निम्नलिखित बातें शामिल की जा सकती हैं-

किसी शहर या महानगर का रात-भर नकली लाइटों से जगमगाना प्रकाश प्रदूषण है। रात के समय दूर से देखने पर किसी महानगर पर रोशनी का विशाल गुंबद आकाश तक फैला हुआ नजर आता है।

रोशनी के कृत्रिम स्रोत से पैदा होने वाली चमकदार और तेज रोशनी जो मानव के लिए असुविधाजनक हो।

रात या दिन में जब हमें प्रकाश की ज़रूरत नहीं हो, फिर भी लाइटें जलती रखी जाएं तो प्रकाश प्रदूषण ही कहलाता है। उदाहरण के लिए स्ट्रीट लाइटों का दिन के समय जलते रहना, इमारत में बिना मकसद रात भर बल्ब जलाए रखना, प्रकाश प्रदूषण है।

रात में ड्राइविंग करते हुए वाहनों की लाइटों का हाई बीम प्रकाश प्रदूषण की एक अन्य किस्म है जो न चाहते हुए भी आपकी आंखों को सीधे तौर पर प्रभावित करती है। इससे हमारी सही रास्ता ढूंढने की क्षमता प्रभावित होती है।

आपके शयनकक्ष में आपके न चाहते हुए भी किसी नकली प्रकाश का पहुंचना प्रकाश प्रदूषण की अन्य किस्म है। ऐसा प्रदूषण आपकी नींद को प्रभावित कर सकता है।

विशेष दिन-त्यौहारों, विवाह-शादियों, मेलों, रात के समारोहों पर रंग-बिरंगी रोशनियों की जगमगाहट प्रकाश प्रदूषण के लिए जिम्मेदार है।

अंधेरे में टेलीविजन, कंप्यूटर, लैपटॉप, मोबाइल फोन आदि की लंबे समय तक पैदा होने वाली रोशनी जो मानवीय आंख के लिए खतरनाक साबित हो सकती है, प्रकाश प्रदूषण के दायरे में आती है।

इसी प्रकार कोई और रोशनी जो मानव व जीव जंतुओं आदि के लिए समस्या पैदा करे और उनकी मनोस्थिति को प्रभावित करे, प्रकाश प्रदूषण कहलाती है।

अनचाही नकली रोशनी प्राकृतिक वातावरण, मानवीय समाज और जीव-जंतुओं पर घातक प्रभाव डालती है जैसे-

प्राकृतिक सुंदरता को ग्रहण

रात में पैदा की जाने वाली नकली रोशनी बेशक हमारे घरों, इमारतों, बाजारों आदि को सुंदरता प्रदान करने में सहायक सिद्ध होती है पर प्राकृतिक तौर पर रात की सुंदरता में सीधे तौर पर बिगाड़ पैदा करने के लिए जिम्मेदार बनती है। शहरी क्षेत्रों में हम रात के आकाश की सुंदरता जैसे तारों की टिमटिमाहट, चांद की चमक, बादलों की मौजूदगी, टूटते तारों और इनकी गतियों को देखने से वंचित रह जाते हैं। जुगनुओं से पैदा हुई चमक नकली रोशनी के प्रभाव में गुम जाती है।

मानव पर प्रभाव

प्रकाश प्रदूषण का मानवीय मन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। अनचाही रोशनी जो मनुष्य के शरीर पर लगातार पड़ती है, मानव की मनोवैज्ञानिक वृत्तियों को सीधे तौर पर प्रभावित करती है। उसके व्यवहार में परिवर्तन के लिए जिम्मेदार बनती है। रात के समय किसी स्रोत से आने वाली नकली रोशनी सोने की आदतों में गड़बड़ पैदा करती है जिससे उसके स्वभाव में परिवर्तन देखने को मिलते हैं। इससे चिड़चिड़ापन, तनाव, गुस्सा और ब्लड प्रेशर की समस्या पैदा हो सकती है। नकली रोशनी में देर रात तक घरेलू या दफ्तरी काम निपटाने के दबाव मानसिक सेहत पर बुरे प्रभाव के साथ-साथ मानवीय आंख पर बुरा प्रभाव डालते हैं। बड़े शहरों में रात के समय होने वाली तेज रोशनी ड्राइवरों, पायलटों के लिए दुविधा पैदा करती है।

जानवरों और पौधों पर प्रभाव

नकली रोशनी में दिनों-दिन हो रही भारी भरकम वृद्धि और शहरों की रात्रि की चमक-दमक ने पृथ्वी के जीव-जगत को प्रभावित किया है। यह रोशनी मनुष्यों की तरह जानवरों में भी बेचैनी पैदा करती है। इन जीवों के व्यवहार जैसे- प्रजनन काल, सोने की आदतों, शिकार करने की आदतों में अनचाहे बिगाड़ पैदा करने के लिए जिम्मेदार बनती हैं। तेज रोशनी के कारण समुद्री जीव अपने रास्ते से भटक जाते हैं। एक सर्वेक्षण के मुताबिक कुछ मछलियों को रात के समय प्राकृतिक प्रकाश में और कुछ मछलियों को तेज रोशनी में दस हफ्तों के लिए रखा गया। नतीजा यह निकला कि तेज रोशनी में रखी मछलियों के स्वभाव, प्रजनन क्रिया, तैरने की गति, खाने-पीने की आदतों और आराम करने की हालत में प्राकृतिक रोशनी में रखी मछलियों से काफी अंतर पाया गया।

हैड लाइटों की तेज चमक के कारण हजारों हिरण सड़क दुर्घटनाओं के शिकार हो जाते हैं। समुद्री कछुए चंद्रमा की रोशनी की बजाय समुद्र किनारे खड़ी चमकदार इमारतों, होटलों की रोशनी की तरफ चलने लगते हैं। पक्षी चमकती हुई इमारतों की तरफ उड़ान भरते हैं और अपने रास्ते से भटक जाते हैं। पेड़-पौधे सूर्य की सीधी रोशनी में अपना भोजन तैयार करते हैं किंतु लगातार नकली रोशनी के कारण भोजन तैयार करने और उनमें ऋतु अनुसार होने वाली परिवर्तन प्रक्रिया प्रभावित होती है। लगातार रोशनी सूक्ष्म पौधों के लिए नुकसानदायक साबित होती है।

प्राकृतिक वातावरण में बिगाड़

तेज नकली रोशनी जब वायुमंडल की तरफ प्रतिबिंबित होती है तो यह अकाश की तरफ से धरती पर आने वाली प्रकाश की किरणों में रुकावट पैदा करती है। प्राकृतिक तौर पर धरती पर पहुंचने वाली अल्ट्रावायलेट किरणें विकास के पैट्र्नों और कुदरती मौसम तब्दीलियों के लिए जरूरी हैं। विकास के यह पैटर्न और मौसमी परिवर्तन लाखों वर्षों के दौरान सूर्य की रोशनी की बदलती मात्रा और तीव्रता के आधार पर अनुकूलित हुए हैं। जिनको नकली रोशनी प्रभावित करती है। यह रोशनी दूरगामी प्रभाव छोड़ती है। इस तरह नकली रोशनी वातावरण के बिगाड़ का सूचक भी बनती जा रही है।

प्रकाश प्रदूषण से बचाव

प्रकाश प्रदूषण के प्रभाव आज स्पष्ट रूप से हमारे सामने आ रहे हैं। इसके बावजूद शहरों और गांवों में इसका विस्तार हो रहा है। इस प्रदूषण की समस्या के रुकने के अभी तक कोई संकेत नजर नहीं आ रहे हैं। प्रकाश प्रदूषण की समस्या से बचाव के लिए हमें निजी तौर पर प्रयास शुरू करने चाहिएं। प्रकाश प्रदूषण के बचाव के लिए लाइट का प्रयोग बेहद संयम और जरूरत पड़ने पर ही करना चाहिए। जहां कम रोशनी से काम चल सकता हो, वहां तेज रोशनी के स्रोतों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

रात को सफर करने से बचना चाहिए। इस बात पर ध्यान रखा जाए कि आपकी तरफ से इस्तेमाल की जा रही रोशनी के कारण कोई मनुष्य या जीव जंतु प्रभावित न होता हो। नकली रोशनी से दूर होकर कभी-कभार प्राकृतिक अंधेरे में संसार के दुर्लभ दृश्यों को अनुभव करने का यत्न करें। यह यत्न सचमुच ही सुखदायक होगा।

अनुवाद- मुलख पिपली

तकदीर का तमाशा

- राणा रणवीर

(राणा रणवीर जहां फिल्म और थिएटर का बहुत अच्छा कलाकार है, वहीं सही सोच वाले समाज के लिए फिक्रमंद एक बढ़िया इंसान भी है। जिस किसी ने उसका पाश के जीवन और कविता पर आधारित एकल पात्र नाटक 'खेतां दा पुत्त' देखा है, वह उसकी कला और सोच समझ के ऊँचे दर्जे की तस्दीक करेगा। समाज प्रति अपने लगाव के कारण ही कुछ वर्ष पहले उसने पंजाबी विद्वान डॉ सुरजीत सिंह के साथ मिलकर नौजवानों को अच्छी दिशा में प्रेरित करने के लिए 'जिंदगी जिंदाबाद' अभियान शुरू किया था। लेखक के तौर पर उसने फिल्म लेखन में योगदान के अलावा एक उपन्यास '20 नवंबर' और दो काव्य संग्रहों की रचना की है। अब उसने अपनी डायरी में लिखे विचारों पर आधारित पुस्तक 'कलाकारियां' छपवाई है। यहां हम इसी पुस्तक के एक अध्याय 'तकदीर का तमाशा' में से कुछ अंश पाठकों के साथ सांझा कर रहे हैं जिसमें किस्मत या तकदीर का राणा ने अलग अंदाज में विश्लेषण किया है - राजपाल सिंह)

''जनाब ! तकदीर क्या है? इसके लिए आम-खास लोगों का, सब का सीधा स्पष्ट उत्तर है कि भगवान नाम की शक्ति द्वारा मनुष्य को जन्म से लेकर मरने तक दिया, हर पल, हर घड़ी का लाइसेंस जो मनुष्य के सुख-दुख, तकलीफ-आराम, अमीरी-गरीबी, जीत-हार या अन्य जो कुछ है; जो खाने-पीने, सोने-जागने आदि को निर्धारित करता है- वह सब भगवान जैसी शक्ति द्वारा पहले ही लिखी गई होती है। अपने आप में बहुत कुछ समेटे बैठी है यह किस्मत, लक या तकदीर। तकदीर में हमें लपेट कर दिया गया है- झूठ और पाखंड का मीठा जहर।''

यह मेरे लिखे नाटक का छोटा सा हिस्सा है। एम.ए. पास करके पैसे कमाने के लिए नुक्कड़ नाटक किया करता था। जब यह 'तकदीर का तमाशा' नाटक लिखा था।

मैं 'तकदीर' शब्द के अर्थ अपने मुताबिक करता हूं ताकि यह तकदीर शब्द मुझे सिर्फ बुत बनाकर खड़ा रहने या बैठने ही न लगा दे। मैंनें तकदीर को अपने दिमाग के कंप्यूटर में इस तरह ड़ाला है कि यह शब्द मुझे जगा कर, समझा कर रखता है

तक़दीर

त - तमन्ना, ताल्लुक, तकड़ाई, तजुर्बा

क- किताब, कोशिश, कर्तव्य, कमियां

द -दर्पण, दृष्टि, दिलेरी, दलील

र -रवैया, रचना, राब्ता, रसना

अब अगर मैं तमन्ना, ताल्लुक, तकड़ाई, तजुर्बा के अर्थ करके और इनका विस्तार देकर समझाने लग गया तो मैं अपने पाठकों की बुद्धि को कम आंकने की गलती कर रहा होऊंगा। अगर मैं तकदीर शब्द को ऐसे देख सकता हूं तो आप अपने हिसाब से इसके अर्थ क्यों नहीं कर सकते।

सुंदर जीवन के लिए और तरक्की के लिए कोशिश करते रहना चाहिए। चाहे हार मिले, चाहे जीत पर कोशिशें न छोड़ें। यह कोशिशें ही कर्तव्य पालन सिखाती हैं और कर्तव्य पालन करने वाले बात-बात पर रोना-धोना छोड़ देते हैं।

किस्मत के उपाय करने से पहले आप सच और झूठ का दर्पण देखना। वैज्ञानिक दृष्टि अपनाना, दिलेरी से अंधविश्वास और वहम-भ्रम को छोड़ना, सही और तर्क वाली दलील की तरफ ध्यान देना। आपका रवैया, रसना (विचार सुनना) राब्ता, रचना कितनी सही है और कितनी ग़लत; इसके बारे समझ कर लिखना, फिर अपने लिखे हुए को पढ़ना और बिना रूढ़ीवादी सोच के नतीजा ढूंढना, सही फैसला करना, किस्मत का पता चल जाएगा

एक प्यारे मित्र ने मुझे एक बार उदास बैठा देख लिया। वह मेरे पास आकर बैठ गया और मुझसे उदासी का कारण पूछा। मैं अपनी किसी असफलता के कारण उदास था और मैं अब सारा दोष 'किस्मत' पर डालते हुए कहा कि मेरी तो किस्मत ही खराब है। प्यारा मित्र कहने लगा उदास क्यों होते हो, किस्मत तुम्हारी खराब है; कोशिश कैसे हैं? मैंने कहा कोशिश में कोई खराबी नहीं। प्यारा मित्र कहने लगा जो चीज ख़राब है, उसे रखना क्यों है और जिस में कोई ख़राबी नहीं, उसके साथ आगे बढ़ो।

मेरा खुद पर से यक़ीन उठ गया था। अपने सफल न होने के कारण और आसपास के कुछ लोगों के कारण मैं अपना विश्वास कहीं रास्ते में ही फैंक आया था। मैं अपनी कोशिशों को किस्मत के खाने में रख आया था पर प्यारे की सलाह से फिर उठा लाया। क्यों किस्मत या तकदीर के सहारे चलता है आदमी ! क्या वक्त, दिन और तारीख किस्मत बताती है? रास्ता

किस्मत बताती है? खुशी, ग़मी, मौत, जन्म, पता नहीं क्या-क्या डाल रखा है हमने किस्मत के रास्ते पर।

आदमी खुद चार्ज हो, चाहे न, पर किस्मत को चार्ज करने के लिए पूजा-पाठ, उपाय और बड़ा कुछ करता रहता है। अपने सोच-विचार, कर्म-मेहनत, सेहत-संचार, साहित्य-संसार, क्रिया-प्रतिक्रिया की परवाह न करते हुए हम किस्मत का जाप जरूर करते रहते हैं। मैंने भी किस्मत का साथ चाहने के चक्कर में अपने आसपास से संबंध बिगाड़ रखा था।

किस्मत ने जितना हमें वहम-भ्रम की दुनिया के साथ जोड़ा,उतना ही हम अपने आप से, अपनों से, और अक्ल के रास्ते से तोड़ा है। 'हार' का उल्टा करके 'राह' बनाकर जीने वाले रहनुमा बन जाते हैं।

मैं बहुत बार हारा हूं। अभी भी हारता रहता हूं। बीते वक्त में अक्सर हार मान लेता था। हार तो अब भी जाता हूं पर अब हार मान कर बैठता नहीं।

मैं अब कभी अपनी हार का कारण किस्मत को नहीं मानता और न ही जीत का सेहरा किस्मत के सर बांधा है क्योंकि मेरे लिए किस्मत अस्तित्व नहीं रखती। मैं अब अपनी हार में से राह बनाने लगा कठिनाई महसूस नहीं करता। मैं अब बे-हिम्मत होकर किस्मत का पल्ला नहीं पकड़ता।

किस्मत शब्द का सहारा लेकर हम बेचारे न बनें और न ही किसी और को किस्मत के नाम पर फालतू में महान बनाएं।

आप कहते हैं वह किस्मत वाला है। उस पर तो ऊपर वाले की कृपा है। उसके पास कोई शक्ति है। वह अच्छी किस्मत वाला है तब ही मशहूर है। उसके भाग्य-कर्म अच्छे हैं तब ही अमीर है। वह तो बच गया क्योंकि वह बहुत लकी है पर, पर-पर....। वह भी आपकी तरह सांस लेता है। बना वह भी आपकी तरह हाड-मांस, रक्त, पानी का ही है। वह भी उसी धरती पर रहता है और आप भी किसी समुद्र की सतह में नहीं रहते। उसने भी कोई हवा में घर नहीं बना रखा। आपको भी नींद आती है, प्यास लगती है, भूख लगती है, और उसके साथ भी यही घटित होता है। फर्क क्या है?

अंतर है सोच, विचार, हालात, तर्क, ज्ञान, दृष्टिकोण में। सामाजिक ताने-बाने का और देश के नेताओं की इमानदारी और बेईमानी का फर्क है। तमन्ना, ताल्लुक, तकड़ाई, तजुर्बा किताब, कोशिश, कर्तव्य, कमियां, दर्पण, दृष्टि, दिलेरी, दलील, रवैया, रचना, राब्ता, रसना का फर्क है। गलत सही ढंग-तरीके, हुनर, मेहनत, विरासत में मिली अमीरी-गरीबी आदि का ही हाथ होता है सब में। इसको हम किस्मत कहकर एक तरफ हो जाते हैं। अगर किस्मत के कारण ही सब कुछ घटित होता है तो फिर दुनिया भर के लोगों को आराम के साथ बैठ जाना चाहिए क्योंकि होना तो वही है जो किस्मत में लिखा है।

तकदीर की जगह मुझे हुनर,
हौसला और लियाकत चाहिए।

अनुवाद - मुलख पिपली

आज मेरी कलम से ...

तर्क की लय पर
जीवन यापन करती स्त्री
अकेली रह जाती है...

क्योंकि

वह लांघ जाती है
अपने तर्क के बल पर
समाजिक सोच के
सभी सीमित दायरों को...

और

पीछे छोड़ती जाती है
स्त्रीत्तव के सारे मानदंड
जो बेड़ियों के समान
उसकी गति को नियंत्रित कर
खूब खड़ा रखते हैं
पितृसत्तात्मक व्यवस्था को...

एक तर्कवादी स्त्री
आग की तरह होती है
और आग कभी जंगल से
रास्ता नहीं पूछती...!!!

- डॉ. अमृतपाल कौर

खबर है कि

पुजारी ने पांच साल की मासूम को मन्दिर में ले जाकर किया दुष्कर्म, लोगों ने धुना, गिरफ्तार

थाना क्षेत्र के एक मन्दिर में 60 वर्षीय पुजारी ने हैवानियत करते हुए 5 साल की मासूम से मन्दिर में दुर्ष्कम कर डाला। चीख-पुकार सुनकर मां और परिजन मौके पर पहुंचे। गुस्साए ग्रामीणों ने इसके बाद आरोपी की धुनाई कर दी। पुलिस मौके पर पहुंची और आरोपी को अपने साथ थाने ले गई। पुलिस ने मामला दर्ज कर आरोपी को गिरफ्तार कर लिया है।

(भास्कर न्यूज 02-06-2022)

गुजरात में नकली नोट छापने वाले गिरोह का खुलासाः प्रसाद के बॉक्स में देते थे डिलीवरी, साधु और मुख्य सूत्रधार समेत 5 लोग गिरफ्तार

गुजरात पुलिस ने 2000 रुपए के नकली नोट छाप रही एक गैंग का पर्दाफाश कर स्वामीनारायण संप्रदाय के एक साधू, गैंग के मुख्य सूत्रधार समेत 5 लोगों को गिरफ्तार कर लिया है। गैंग अब तक 1.26 करोड़ रु. कीमत के नकली नोट छाप चुका है। इनसे 70 लाख रु. के नकली नोट बरामद हुए हैं। ये नकली नोटों की डिलीवरी प्रसाद के वॉक्स में करते थे, ताकि किसी को शक न हो।

(भास्कर न्यूज)

शिवलिंग समझकर की एलईडी बल्ब की पूजा, पंद्रह सौ रुपए आया चढ़ावा

कुंवरगांव इलाके में एक अजीब मामला देखने को मिला। लोग अंधविश्वास के चलते सुबह से दोपहर तक शिवलिंग समझकर एलईडी बल्ब की पूजा करते रहे। दोपहर बाद जब पूरा खोदा तो वह एलईडी बल्ब निकला। तब तक उस पर जल, दूध और करीब पंद्रह सौ रुपए भी चढ़ा दिए थे।

गांव गंज में एक व्यक्ति अपनी पाठशाला में सफाई कर रहा था। झाड़ू लगाने के दौरान अचानक पशुशाला में एक सफेद चीज़ दिखी। थोड़ी मिट्टी हटाई तो वह गोल चीज़ चमक रही थी। उसने ज्यादा मिटी नहीं हटाई। उसकी सूचना पर गांव के तमाम लोग आ गए। कुछ लोग कहने लगे कि ये शिवलिंग है। उसके आसपास कट्टा बिछा दिया गया। मौके पर उसकी पूजा होने लगी। इसकी गांव में ऐसी खबर दौड़ी कि लोग अपने-अपने घर में चढ़ावे का सामान दूध, जल, रुपए और प्रसाद आदि लाकर चढ़ाने लगे। दोपहर तक तमाम लोगों ने दूध चढ़ाया। करीब पंद्रह सौ रुपये चढ़ावे में भी आ गए। दोपहर बाद कुछ लोगों ने मिट्टी हटाकर उस चीज को पूरा निकाल दिया तो एलईडी बल्ब निकला।

(संवाद न्यूज एजेंसी)

हत्यारा

हत्यारा कोई एक नहीं है
पूरी की पूरी भीड़ हत्यारी है
ऐसा लगता है पूरा देश ही हत्यारा है
रंग बिरंगे दस्ताने पहनकर लोग हत्याएं कर रहे हैं
सिर्फ टोपी देखकर भी हत्या हो रही हैं
या गमछे का रंग देखकर भी
बढ़ी हुई दाड़ी या तिलकधारी
हत्यारों से सुसज्जित है ये महादेश ।
एक हत्यारे ने अभी अभी
भावना के कुशल हथियार से
अपनी जन्मी सन्तान की खुशियों की हत्या कर दी है
जलते आंसुओं से निकलती बास
मेरे नथुने में बस गयी है ।
एक दूसरे हत्यारे ने
मुस्कान को फेंककर मारा है
एक युवती के वक्षों पर ।
एक तीसरे हत्यारे ने
कुटिलता से हत्या की है

कपिल भारदवाज

अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति, महाराष्ट्र और तर्कशील सोसायटी पंजाब का आपसी तालमेल

- राम स्वर्ण लखेवाली

तर्कशील आंदोलन के राष्ट्रीय नायक डाक्टर नरेंद्र दाभोलकर की वैज्ञानिक चेतना के प्रचार प्रसार को समर्पित अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति के साथ तर्कशील सोसायटी पंजाब का तालमेल दो दशक पुराना है। यह तालमेल समाज मे अज्ञानता, अंधविश्वास और असमानताओं पर काबू पाने के लिए महत्वपूर्ण है। देश भर में चलते वैज्ञानिक चेतना को समर्पित व्यक्ति व संस्थाएं पंजाब के तर्कशील आंदोलन के लिए बहुत महत्व रखती हैं। जिनमे महाराष्ट्र में कार्यरत अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति के साथ पंजाब की तर्कशील लहर का विशेष लगाव रहा है। मराठी से हिंदी व पंजाबी में तर्कशील रचनाओं का आदान प्रदान रहा है जो प्रेरणा, उत्साह देता है।

कई साल पहले अनिस की मराठी पत्रिका के प्रबंध संपादक राहुल थोराट हरियाणा में खाप पंचायतों के अध्ययन के लिए आए थे। हरियाणा में विभन्न स्थानों पर तर्कशील साथियों के साथ उन्होंने खाप पंचायतों के प्रमुखों, खाप पंचायतों में शिरकत की। साथ ही सम्मान के लिए कत्ल कर दिए गए युवाओं के परिवारों,इस क्षेत्र में सक्रिय सामाजिक संस्थाओं के साथ गहरी बात चीत की। जिसका विस्तृत विवरण उन्होंने अंधश्रद्धा निर्मूलन वार्ता पत्र (मराठी) में छापा है। हरियाणा में अपने अध्ययन के कार्य के उपरांत उन्होंने पंजाब में भ्रमण करने का मन बनाया। जिसमें वे तर्कशील साथियों के साथ जलियांवाला बाग अमृतसर, देश भगत यादगारी हाल जालन्धर गए। तर्कशील भवन बरनाला में भी आए व तर्कशील सोसायटी के अथक प्रयासों की सराहना की। खटकड़ कलां गांव में उन्होंने शहीद ए आज़म भगत सिंह का पैतृक घर, शहीद भगतसिंह की यादगार को भी देखा व भगतसिंह के अस्तित्व को तलाश करते नज़र आए। तर्कशील भवन बरनाला पहुंचकर उन्होंने प्रसन्नता और संतोष व्यक्त किया। युग कवि शहीद पाश के घर तलवंडी सलेम पहुंचकर उस गांव की मिट्टी को नमन किया। सभी जगह पर मिले मान सम्मान ने उनको पंजाब की विरासत से जोड़ दिया था। वे जरूरी संस्मरणो को अपनी डायरी में नोट करते जाते थे व अपने साथ आए मराठी साथियों से गुफ़्तगू करते जाते थे। इस तरह वे दिन भर हमारे साथ रहते थे और शाम को घर लौटने पर महाराष्ट्र में अपने अनुभवों व प्रेरक प्रसंगों को सांझा करते थे और इस तरह हरियाणा व पंजाब के विभन्न स्थलों पर भ्रमण के सुखद अनुभवों को लेकर वे महाराष्ट्र लौटे।

हमें पुणे में राष्ट्रीय सामाजिक और साहित्यक उत्सव में भाग लेने का अवसर मिला। राहुल हमारी प्रतीक्षा कर रहे थे। वे तीन दिन हमारे साथ रहे। महत्वपूर्ण स्थानों पर वे हमें ले गए व अपने सहयोगियों, मित्रों से मिलवाया। महान समाज सुधारक ज्योति फुले द्वारा शिक्षा और समाज के लिए किए गए महान कार्यों के बारे में उन्होंने गर्व से बताया। साधारण, प्रेरक, शांतिप्रिय व बौद्धिक लोगों के संग रह कर हमें ऐसा अहसास होता रहा कि जैसे रोशनी की नई किरणे प्रकाशमान हो उठी हों। किताबों को प्यार करने वाले गांव भिलार, मराठी पत्रिका साधना और हर तरफ साहित्यक वातावरण ने हमे प्रफुल्लित कर दिया। लेखन का कार्य करना, पढ़ना और सामाजिक चेतना के लिए कार्य करते रहना राहुल के जीवन का उद्देश्य है। वे अनिस के एक समर्पित कार्यकर्ता हैं हम उनके साथ पुणे से अनिस की मासिक मराठी पत्रिका के मुख्यालय सांगली गए। पत्रिका का कार्यालय मराठी साहित्य का भंडार है। मराठी पत्रिका के विशेष संस्करणों के बारे में उन्होंने विस्तार से चर्चा की।

राहुल का घर उसके काम से अलग नहीं है। पत्रिका के कार्यालय के ऊपर ही उनका निवास है। जहां पर बैठ कर वे रात भर पत्रिका के कार्यों का निपटान करते हैं। वे संगठन के विभन्न प्रोजेक्ट पर कार्य करते हैं। अंधविश्वासों के अंधेरे को मिटाने और कर्मकांडो के भ्रम को दूर करने के अहम कार्य को संगठन ने उन्हें सौंपा है। उनके मन मे अंधविश्वास मुक्त और वैज्ञानिक चेतना से लैस समाज का सुनहरा सपना है। जिसके लिए उनका समर्पण बेमिसाल है वे अथक योद्धा की तरह कार्य करते हैं।उनकी जरूरतें सीमित हैं लेकिन उसका कार्य क्षेत्र असीमित है। जिन्हें वे डाक्टर नरेंद्र दाभोलकर की देन मानते हैं।

वे अपने कार्यालय में बैठकर संगठन के कार्य करते रहने को सबसे अच्छा काम बताते हैं। **... शेष पृष्ठ 48 पर**

राजस्थान में तर्कशील आवाज की गूंज

राजस्थान के पर्वतीय क्षेत्र के जिले उदयपुर में शिक्षा भवन ट्रस्ट 650 एकड़ में फैला हुआ है। ट्रस्ट की तरफ से दो राज्यों राजस्थान व उत्तराखंड के 64 सरकारी स्कूलों के 350 बच्चों के लिए समर कैंप लगाया गया। इस कैंप में तर्कशील प्रोग्राम देने के लिए बुलावा मिला। तर्कशील सोसायटी के राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय विभाग की तरफ से रामकुमार पटियाला ने इस अवसर पर विद्यार्थियों को संबोधन किया। उन्होंने बताया के वैज्ञानिक सोच जिंदगी के हर कदम पर काम आती है । उन्होंने जादू के ट्रिक दिखा कर विद्यार्थियों को अंधविश्वासों के प्रति जागरूक किया। जादू एक कला है, परंतु कुछ चालाक लोग जादू या हाथ की सफाई को धर्म और तांत्रिक विद्या के साथ मिलाकर चमत्कारों के नाम पर लोगों को लूटते हैं। जब के इस पृथ्वी पर कभी भी चमत्कार नहीं हुआ सिर्फ घटनाएं घटती हैं। हर घटना के पीछे कोई कारण होता है। समाज में फैले अंधविश्वासों की व्याख्या करते हुए उन्होंने समझाया कि किस्मत का फलसफा, पिछले कर्मों के फल का वहम, आत्मा और स्वर्ग-नरक की धारणाएं हमारे समाज के विकास में रुकावट है। बाबाओं के शब्द जाल में फंस कर हमारी भोली जनता अपनी आमदनी का बड़ा हिस्सा अपना अगला जन्म सुधारने के लिए खर्च कर देती है। वैज्ञानिक सोच अपनाकर इसी पृथ्वी को खूबसूरत बनाया जा सकता है, यहीं पर सबके लिए शिक्षा, सेहत और रोजगार पैदा किया जा सकता है। कैंप में शामिल बच्चों की सोच बहुत बढ़िया थी। उन्होंने जादू के काफी ट्रिकों को समझ लिया। यह एक मनोरंजन भरपूर कला है। अंत में बहुत से विद्यार्थियों ने सवाल पूछे ।

यह भी दिलचस्प बात है कि सवाल जवाब सेशन में बात अक्सर परमात्मा और आत्मा के बारे में जरूर चल पड़ती है। रामकुमार ने बच्चों के सवालों के जवाब दिए। प्रोग्राम के शुरू में ही श्री कमल महेंद्रू ने प्रोग्राम की जानकारी देते हुए बच्चों से पूछा छींक आने या बिल्ली के रास्ता काटने पर क्या काम नहीं होता है, तो सभी ने उत्तर दिया कि ऐसा कुछ नहीं होता। कैंप के कोऑर्डिनेटर अरुण कुमार ने प्रोग्राम की प्रशंसा की। अंत में जन-जवार यूट्यूब चैनल की तरफ से अजय प्रकाश ने बच्चों को धर्म की तंगनजरी से निकलकर अच्छा इंसान बनने की प्रेरणा दी। उन्होंने बताया कि आज देश को खाने- पीने , पहनने जैसी मामूली बातों और धर्मों के नाम पर जनता को बांटा जा रहा है । लोगों का ध्यान महंगाई, बेरोजगारी, गरीबी जैसे मुद्दों की तरफ से हटाकर उनको धारा 370, मुसलमान, पाकिस्तान में उलझाया जा रहा है । आज की नौजवान पीढ़ी को सेहत शिक्षा और रोजगार जैसे मुद्दों पर सवाल उठाने की जरूरत है। उन्होंने अपने यूट्यूब चैनल के लिए प्रोग्राम की कवरेज की। हिंदी की किताब और देव पुरुष हार गए की 10 प्रतियां बच्चों और टीचरों ने हाथों-हाथ खरीद ली। ट्रस्ट के प्रधान अजय मेहता ने कहा कि ऐसे प्रोग्राम बार-बार होने चाहिए। बच्चों के अलावा अध्यापकों जैसे दिल्ली यूनिवर्सिटी से रितिका आदि ने भी सवाल पूछे। उन्होंने राजकुमार जी से पूछा कि आपने परमात्मा के बारे में सवाल करने या शंका करना किस उम्र में शुरू कर दिया था? रामकुमार ने इन सवालों के बारे में और जिंदगी के खट्टे मीठे तजुर्बों के बारे में दिलचस्प जानकारी बच्चों और अध्यापकों से सांझा की।

पेशकश- जसवंत मोहाली, राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय तालमेल विभाग के मुखिया

पृष्ठ 47 का शेष राहुल कहते हैं कि यह कलम की शक्ति है कि जिन फासीवादी ताकतों ने डॉक्टर नरेंद्र दाभोलकर को हमसे छीना है उनके मनसूबे कभी भी पूरे नही होंगे। डाक्टर दाभोलकर सदा हमारे साथ हैं, यही उनके विचारों और आदर्शों की ताकत है। यह ही वे देश के सभी तर्कशीलों की आपसी एकता का आधार स्तम्भ भी है। जो हम सब को सदा चलते रहने की प्रेरणा देता है।

फूलों, किताबों और मुस्कान के साथ हमने उन्हें विदा कहा। ये हमारी यात्रा के अनमोल क्षण थे। उनके साथ यात्रा करते हुए हमे जो प्रेरणा मिली, वह थी कि हर घर में किताब होनी चाहिए, मन में वैज्ञानिक चेतना के दीपक जलते रहें। जानने की चाह जीने की चाहत, मंजिल पाने की उमंगे सदा बनी रहें।

95010-06626
गुरमीत अम्बाला (हिंदी अनुवाद)

मुबारक बाला कौन है?

मुबारक बाला पूर्वोत्तर नाइजीरिया के कानो राज्य के एक स्वयं घोषित नास्तिक हैं। वह 2014 में तब चर्चा में आए जब मीडिया में आया कि उनके नास्तिक घोषित होने के बाद परिवार के सदस्यों द्वारा जबरन नशा दिया जाता रहा और उन्हें एक मानसिक रोगी के रूप में समझ लिया गया। उन्हें पकड़ लिया गया लेकिन कुछ समय के बाद उन्हें रिहा कर दिया गया।

इसके बाद वे नाइजीरियाई नास्तिक और मानव अधिकारों की एक मुखर आवाज बन गए। और नाइजीरियाई मानवतावादी संघ (Humanist Association) नाइजीरिया के अध्यक्ष के रूप में कार्य करने लगे।

बाला को 28 अप्रैल, 2020 को कथित तौर पर एक फेसबुक पोस्ट के लिए गिरफ्तार किया गया था जिसमें उन्होंने कथित तौर पर एक धर्म विशेष के प्रति अपमान करने का आरोपी बनाया गया।

गिरफ्तारी के बाद वकीलों के एक समूह ने कानो राज्य पुलिस आयुक्त को बाला के खिलाफ फेसबुक पर ऐसी चीजें पोस्ट करने के लिए मुकदमा चलाने के लिए याचिका दायर की, और बाला के फेसबुक अकाउंट को बंद करने के लिए कहा गया।

कडुना राज्य पुलिस ने कानो राज्य पुलिस के अनुरोध के जवाब में बाला को कडुना राज्य में उनके घर से गिरफ्तार किया। फिर उन्हें कानो राज्य की पुलिस हिरासत में स्थानांतरित कर दिया गया, जहां उन्हें एक वर्ष से अधिक समय तक बिना किसी आरोप के रखा गया। दिसंबर में राजधानी अबुजा की एक संघीय अदालत ने बाला की हिरासत को असंवैधानिक ठहराया और कानो में अधिकारियों को आदेश दिया कि या तो मुबारक बाला पर धर्मनिरपेक्ष कानून के तहत अपराध का आरोप लगाया जाए या उसे रिहा कर दिया जाए। अगस्त 2021 में, एक अदालत ने बाला पर प्रथागत कानून के तहत 10 मामलों में 'ईशनिंदा' फेसबुक पोस्ट के संबंध में सार्वजनिक अशांति पैदा करने का आरोप लगाया, और जो कि अप्रैल 2020 के दौरान कथित तौर पर भी आरोप लगाया गया था।

5 अप्रैल, 2022 को, कानो राज्य उच्च न्यायालय ने मुबारक बाला को क्रमश: कानो राज्य दंड संहिता की धारा 210 और 114 के तहत सार्वजनिक अशांति पैदा करने के 18 मामलों में दोषी ठहराते हुए 24 साल जेल की सजा सुनाई है। जिस पर विश्व भर के मानवतावादी , तर्कशील व नास्तिक संगठन अपना रोष व्यक्त करने लगे हैं।

साभार:- United States Commission on International Religious Freedom

तर्कशील लहर के बढ़ते कदमों का सफर

5 जून 2022 को बरनाला में सम्पन्न तर्कशील सोसायटी पंजाब के वार्षिक सम्मेलन में मंच पर अध्यक्ष मंडल में उपस्थित प्रतिनिधि एंव हाल में बैठे तर्कशील कार्यकर्ता

मुबारक बाला को 24 वर्षो की जेल

ह्यूमनिस्ट इंटरनेशनल नाइजीरिया के ह्यूमनिस्ट एसोसिएशन के अध्यक्ष मुबारक बाला को नाईजीरिया सरकार द्वारा 24 वर्षो की कैद की सजा दिए जाने की सख्त निंदा करता है। ''विश्व की सभी मानवतावादी संस्थाएं अपने मित्र मुबारक, उनकी पत्नी व बेबी पुत्र के साथ हैं। यह फैसला नाइजीरिया सरकार के लिए शर्मनाक है,जिन्होंने बिना सोचे समझे इतनी बड़ी सजा एक मानवतावादी के लिए की है'' मानवताबादी विश्व संस्थान के अध्यक्ष एंड्रयू कॉप्सन ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा है। मानवतावादी विश्व संस्थान (Humanists International) अभी कानूनी तौर पर क्या किया जा सकता है, इस विषय पर विचार कर रही है और विश्व स्तर पर नाइजीरिया सरकार को इस फैसले को निरस्त करने की अपील करवाने के लिए प्रयासरत है। सभी मानवता वादी, तर्कशील इस विषय पर विस्तार से जानने के इच्छुक हैं। संस्थान कोशिस कर रहा है कि उपरोक्त घटनाक्रम का लोगों को विस्तृत विवरण मिले। मानवतावादी विश्व संस्थान इस सम्बन्ध में नाइजीरिया सरकार से सम्पर्क साध रहा है ताकि इस अमानवीय फैसले को जल्दी समाप्त किया जा सके और हमारे साथी मुबारक बला जल्दी सुरक्षित तरीके से बाहर आ सकें।

गैरी मकलीलैंड (प्रमुख कार्यकारी, ह्यूमनिस्ट इंटरनेशनल)

तर्कशील सोसायटी हरियाणा व तर्कशील सोसायटी पँजाब ह्यूमनिस्ट इंटरनेशनल के साथ इस अमानवीय फैसले पर हर कदम पर खड़ा रहने की प्रतिबद्धता व्यक्त करती है।

If undelivered please return to :

Tarksheel

Tarksheel Bhawan, Tarksheel Chowk,
Sanghera ByPass, BARNALA-148101
Post Box No. 55

Ph. 01679-241466, Cell. 98769 53561
Web : www.tarksheel.org
e-mail : tarkshiloffice@gmail.com

BOOK POST
(Printed Matter)

To ....

....

....